अध्याय २१

भगवान् श्रीकृष्ण का ऐश्वर्य तथा माधुर्य

श्रील भक्तिविनोद ठाकुर ने इक्कीसवें अध्याय का सारांश इस प्रकार दिया है : इस अध्याय में श्री चैतन्य महाप्रभु कृष्णलोक, आध्यात्मिक आकाश, कारण सागर तथा असंख्य ब्रह्माण्डों से युक्त भौतिक जगत् का पूर्ण वर्णन करते हैं। इसके बाद श्री चैतन्य महाप्रभु द्वारका में कृष्ण के साथ ब्रह्माजी की भेंट तथा भगवान् द्वारा ब्रह्मा के गर्व को दूर किये जाने का वर्णन करते हैं। इसमें ब्रह्मा के साथ कृष्ण की एक लीला का भी वर्णन हुआ है। इसी अध्याय में *चैतन्य-चरितामृत* के लेखक ने कृष्ण की लीलाओं एवं कृष्ण के अनुपम सौन्दर्य के विषय में कुछ सुन्दर पद्य प्रस्तुत किये हैं। शेष अध्याय में कृष्ण के साथ हमारे अन्तरंग सम्बन्धों का वर्णन है।

अगत्येक-गतिं नत्वा हीनार्थाधिक-साधकम् ।
श्री-चैतन्यं लिखाम्यस्य माधुर्यैश्वर्य-शीकरम् ॥ १॥

अगत्येक-गतिं नत्वा हीनार्थाधिक-साधकम् ।
श्री-चैतन्यं लिखाम्यस्य माधुर्य्यैश्वर्य्य-शीकरम् ॥ १ ॥

अगति-एक-गतिम्—जीवन के लक्ष्य के प्रति अज्ञानी बद्धजीवों के एकमात्र आश्रय को; **नत्वा**—प्रणाम करते हुए; **हीन-अर्थ**—आध्यात्मिक ज्ञान से विहीन बद्धजीवों की आवश्यकतों को; **अधिक**—बढ़कर; **साधकम्**—प्रदान करने वाले; **श्री-चैतन्यम्**—भगवान् श्री चैतन्य महाप्रभु को; **लिखामि**—मैं लिख रहा हूँ; **अस्य**—उनके; **माधुर्य्य-ऐश्वर्य्य**—माधुर्य तथा ऐश्वर्य का; **शीकरम्**—एक अल्प अंश।

अनुवाद

श्री चैतन्य महाप्रभु को सादर नमस्कार करते हुए मैं उनके ऐश्वर्य तथा

माधुर्य के एक कणमात्र का वर्णन करता हूँ। वे आध्यात्मिक ज्ञान से रहित पतित बद्धात्माओं के लिए अत्यन्त हितकारी हैं और वे उन लोगों के लिए एकमात्र आश्रय हैं, जो जीवन के वास्तविक लक्ष्य को नहीं जानते।

जय जय श्री-चैतन्य जय नित्यानन्द ।
जयाद्वैत-चन्द्र जय गौर-भक्त-वृन्द ॥२॥

जय जय श्री-चैतन्य जय नित्यानन्द ।
जयाद्वैत-चन्द्र जय गौर-भक्त-वृन्द ॥ २॥

जय—जय हो; **जय**—जय हो; **श्री-चैतन्य**—श्री चैतन्य महाप्रभु की; **जय**—जय हो; **नित्यानन्द**—नित्यानन्द प्रभु की; **जय**—जय हो; **अद्वैत-चन्द्र**—अद्वैत आचार्य की; **जय**—जय हो; **गौर-भक्त-वृन्द**—श्री चैतन्य महाप्रभु के सभी भक्तों की।

अनुवाद

श्री चैतन्य महाप्रभु की जय हो! श्री नित्यानन्द प्रभु की जय हो! अद्वैत आचार्य की जय हो! श्री चैतन्य महाप्रभु के सारे भक्तों की जय हो!

सर्व स्वरूपेर धाम——परव्योम-धामे ।
पृथक्पृथकैकुण्ठ सब, नाहिक गणने ॥३॥

सर्व स्वरूपेर धाम——परव्योम-धामे ।
पृथक्-पृथक् वैकुण्ठ सब, नाहिक गणने ॥ ३॥

सर्व—सभी; **स्वरूपेर**—स्वरूपों के; **धाम**—आश्रय; **पर-व्योम-धामे**—आध्यात्मिक आकाश में; **पृथक्-पृथक्**—अलग-अलग; **वैकुण्ठ**—वैकुण्ठ लोक; **सब**—सभी; **नाहिक गणने**—जिनकी गिनती नहीं की जा सकती।

अनुवाद

श्री चैतन्य महाप्रभु ने आगे कहा, "भगवान् के सारे दिव्य रूप आध्यात्मिक आकाश में पाये जाते हैं। वे उस धाम में वैकुण्ठ लोकों की अध्यक्षता करते हैं, किन्तु उन वैकुण्ठ लोकों की कोई गणना नहीं है।

शत, सहस्र, अयुत, लक्ष, कोटी-योजन ।
एक एक वैकुण्ठेर विस्तार वर्णन ॥४॥

शत, सहस्र, अयुत, लक्ष, कोटी-योजन ।
एक एक वैकुण्ठेर विस्तार वर्णन ॥ ४॥

शत—सौ; **सहस्र**—हजार; **अयुत**—दस हजार; **लक्ष**—लाख; **कोटी**—करोड़; **योजन**—योजन (८ मील); **एक एक**—प्रत्येक; **वैकुण्ठेर**—वैकुण्ठ लोक के; **विस्तार**—फैलाव का; **वर्णन**—वर्णन।

अनुवाद

"प्रत्येक वैकुण्ठ लोक की चौड़ाई आठ सौ, आठ हजार, अस्सी हजार, आठ लाख, आठ करोड़ मील है। दूसरे शब्दों में, प्रत्येक वैकुण्ठ लोक का विस्तार हमारी मापने की शक्ति के परे है।

सब वैकुण्ठ——व्यापक, आनन्द-चिन्मय ।
पारिषद-षड़ैश्वर्य-पूर्ण सब हय ॥ ५॥
सब वैकुण्ठ——व्यापक, आनन्द-चिन्मय ।
पारिषद-षड़ैश्वर्य्य-पूर्ण सब हय ॥ ५॥

सब—सभी; **वैकुण्ठ**—आध्यात्मिक लोक; **व्यापक**—विस्तृत; **आनन्द-चित्-मय**—आध्यात्मिक आनन्द से भरे हुए; **पारिषद**—पार्षद; **षट्-ऐश्वर्य्य**—छः प्रकार के ऐश्वर्य से; **पूर्ण**—पूरे; **सब**—सभी; **हय**—हैं।

अनुवाद

"प्रत्येक वैकुण्ठ लोक विस्तृत है और आध्यात्मिक आनन्द से निर्मित है। इसके सारे निवासी भगवान् के पार्षद हैं और उनमें स्वयं भगवान् जैसा ही पूर्ण ऐश्वर्य पाया जाता है। वैकुण्ठलोक इस तरह स्थित हैं।

अनन्त वैकुण्ठ एक एक देशे यार ।
सेई परव्योम-धामेर के करू विस्तार ॥ ६॥
अनन्त वैकुण्ठ एक एक देशे य्यार ।
सेइ परव्योम-धामेर के करु विस्तार ॥ ६॥

अनन्त वैकुण्ठ—असंख्य वैकुण्ठ लोक; **एक एक**—विशिष्ट; **देशे**—स्थान में; **य्यार**—जिसके; **सेइ**—उस; **पर-व्योम**—आध्यात्मिक आकाश के; **धामेर**—धाम का; **के करु विस्तार**—विस्तार कौन समझ सकता है।

अनुवाद

"चूँकि सारे वैकुण्ठ लोक परव्योम के किसी एक एक कोने में स्थित हैं, अतः उस परव्योम को कौन माप सकता है?

अनन्त वैकुण्ठ-परव्योम यार दल-श्रेणी ।
सर्वोपरि कृष्णलोक 'कर्णिकार' गणि ॥७॥
अनन्त वैकुण्ठ-परव्योम यार दल-श्रेणी ।
सर्वोपरि कृष्णलोक 'कर्णिकार' गणि ॥७॥

अनन्त—असंख्य; **वैकुण्ठ**—वैकुण्ठ लोक; **पर-व्योम**—आध्यात्मिक आकाश; **यार**—जिसके; **दल-श्रेणी**—पंखुड़ियों के ढेर; **सर्व-उपरि**—आध्यात्मिक आकाश के सर्वश्रेष्ठ भाग में; **कृष्ण-लोक**—भगवान् कृष्ण का लोक; **कर्णिकार गणि**—हम कमल पुष्प की कर्णिका मानते हैं।

अनुवाद

"परव्योम के आकार की तुलना कमल के फूल से की जाती है। इस फूल का सबसे ऊपरी भाग कर्णिका कहलाता है और उसी कर्णिका के भीतर कृष्ण का धाम है। इस आध्यात्मिक कमल फूल की पंखुड़ियाँ ही अनेक वैकुण्ठ लोक हैं।

एई-मत षड्-ऐश्वर्य, स्थान, अवतार ।
ब्रह्मा, शिव अन्त ना पाय—जीव कोन्छार ॥८॥
एइ-मत षड्-ऐश्वर्य्य, स्थान, अवतार ।
ब्रह्मा, शिव अन्त ना पाय—जीव कोन् छार ॥८॥

एइ-मत—ऐसे; **षट्-ऐश्वर्य्य**—छः ऐश्वर्य; **स्थान**—निवास; **अवतार**—अवतार; **ब्रह्मा**—ब्रह्माजी; **शिव**—शिवजी; **अन्त ना पाय**—सीमा नहीं जान सके; **जीव**—जीवात्मा; **कोन्**—क्या है; **छार**—तुच्छ।

अनुवाद

"प्रत्येक वैकुण्ठ लोक दिव्य आनन्द, पूर्ण ऐश्वर्य तथा स्थान से पूर्ण है और हर एक में अवतारों का निवास है। यदि ब्रह्माजी तथा शिवजी आध्यात्मिक आकाश तथा वैकुण्ठ लोकों की लम्बाई तथा चौड़ाई नहीं

माप सकते, तो भला सामान्य जीव किस तरह उनकी कल्पना कर सकता है?

কো বেত্তি ভূমন্ভগবন্পরাত্মন্
যোগেশ্বরোতীর্ভবতস্ত্রি-লোক্যাম্ ।
ক্ব বা কথং বা কতি বা কদেতি
বিস্তারয়ন্ক্রীড়সি যোগ-মায়াম্ ॥৯॥

को वेत्ति भूमन्भगवन्परात्मन्
योगेश्वरोतीर्भवतस्त्रि-लोक्याम् ।
क्व वा कथं वा कति वा कदेति
विस्तारयन्क्रीड़सि योग-मायाम् ॥ ९ ॥

कः—कौन; **वेत्ति**—जानता है; **भूमन्**—हे परम महान्; **भगवन्**—हे पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान्; **पर-आत्मन्**—हे परमात्मा; **योग-ईश्वर**—हे योग शक्तियों के स्वामी; **ऊतीः**—लीलाएँ; **भवतः**—आपकी; **त्रि-लोक्याम्**—तीनों लोकों में; **क्व**—कहाँ; **वा**—किस प्रकार; **कथम्**—कैसे; **वा**—या; **कति**—कितने; **वा**—या; **कदा**—कब; **इति**—ऐसे; **विस्तारयन्**—विस्तार करके; **क्रीड़सि**—आप खेलते हैं; **योग-मायाम्**—आध्यात्मिक शक्ति।

अनुवाद

"'हे परम पूर्ण! हे पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान्! हे परमात्मा, समस्त योगशक्तियों के स्वामी! आपकी लीलाएँ इन संसारों में लगातार चलती रहती हैं, किन्तु इसका अनुमान कौन लगा सकता है कि आप कहाँ, कैसे, और कब अपनी आध्यात्मिक शक्ति का प्रयोग कर रहे हैं और अपनी लीलाएँ प्रकट कर रहे हैं? इन कार्यों के रहस्य को कोई नहीं समझ सकता।'

तात्पर्य

यह श्लोक *श्रीमद्भागवत* (१०.१४.२१) से लिया गया है।

এই-মত কৃষ্ণের দিব্য সদগুণ অনন্ত ।
ব্রহ্মা-শিব-সনকাদি না পায় যাঁর অন্ত ॥১০॥

এइ-মত কৃষ্ণের দিব্য সদ্গুণ অনন্ত ।
ব্রহ্মা-শিব-সনকাদি না পায় যাঁর অন্ত ॥ ১০ ॥

एइ-मत—इस प्रकार; **कृष्णेर**—भगवान् कृष्ण के; **दिव्य**—दिव्य गुण; **सत्-गुण**—आध्यात्मिक गुण; **अनन्त**—असीमित; **ब्रह्मा**—ब्रह्माजी; **शिव**—शिवजी; **सनक-आदि**—चार कुमार आदि; **ना**—नहीं; **पाय**—प्राप्त करते; **याँर**—जिनकी; **अन्त**—सीमा।

अनुवाद

"कृष्ण के आध्यात्मिक गुण भी अनन्त हैं। ब्रह्माजी, शिवजी तथा चारों कुमार जैसे महापुरुष भी भगवान् के इन दिव्य गुणों का पार नहीं पा सकते।

गुणात्मनस्तेऽपि गुणान्विमातुं
हितावतीर्णस्य क ईशिरेऽस्य ।
कालेन यैर्वा विमिताः सु-कल्पैर्
भू-पांशवः खे मिहिका द्यु-भासः ॥ ११॥

गुणात्मनस्तेऽपि गुणान्विमातुं
हितावतीर्णस्य क ईशिरेऽस्य ।
कालेन यैर्वा विमिताः सु-कल्पैर्
भू-पांशवः खे मिहिका द्यु-भासः ॥ ११॥

गुण-आत्मनः—तीन गुणों के उपद्दष्टा; **ते**—आपके; **अपि**—अवश्य; **गुणान्**—गुणों की; **विमातुम्**—गिनती के लिए; **हित-अवतीर्णस्य**—जो सभी जीवों के कल्याण के लिए प्रकट हुए हैं; **के**—कौन; **ईशिरे**—समर्थ थे; **अस्य**—ब्रह्माण्ड के; **कालेन**—समय आने पर; **यैः**—जिसके द्वारा; **वा**—या; **विमिताः**—गिने जायें; **सु-कल्पैः**—महान् विज्ञानियों द्वारा; **भू-पांशवः**—ब्रह्माण्ड के परमाणु; **खे**—आकाश में; **मिहिकाः**—बर्फ के कण; **द्यु-भासः**—चमकते सितारे तथा ग्रह।

अनुवाद

"'भले ही समय आने पर बड़े बड़े वैज्ञानिक ब्रह्माण्ड के सारे परमाणुओं, आकाश के सारे नक्षत्रों तथा ग्रहों तथा बर्फ के सारे कणों की गणना कर लें, किन्तु उनमें से ऐसा कौन है, जो पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् के अनन्त दिव्य गुणों की गणना कर सके? वे समस्त जीवों के लाभ के लिए इस धरातल पर अवतरित होते हैं।'

तात्पर्य

यह श्लोक भी *श्रीमद्भागवत* (१०.१४.७) से लिया गया है।

ব্রহ্মাদি রহু—সহস্র-বদনে 'অনন্ত' ।
নিরন্তর গায় মুখে, না পায় গুণের অন্ত ॥ ১২ ॥

ব্রহ্মাদি রহু—সহস্র-বদনে 'অনন্ত' ।
নিরন্তর গায় মুখে, না পায় গুণের অন্ত ॥ ১২ ॥

ব্রহ্মা-আদি রহু—ব্রহ্মাজী আদি को छोड़िये; **সহস্র-বদনে**—हजारों मुखों से; **অনন্ত**—भगवान् अनन्त; **নিরন্তর**—लगातार; **গায়**—गाते हैं; **মুখে**—मुखों से; **না পায়**—नहीं पाते; **গুণের**—भगवान् के गुणों का; **অন্ত**—अन्त।

अनुवाद

"ब्रह्माजी की तो कोई बात ही नहीं, हजार सिर वाले भगवान् अनन्त भी भगवान् के दिव्य गुणों का पार नहीं पा सकते, यद्यपि वे निरन्तर उनका महिमागान करते रहते हैं।

নান্তং বিদাম্যহমমী মুনয়োঽগ্রজাস্তে
মায়া-বলস্য পুরুষস্য কুতোঽবরা যে ।
গায়ন্গুণান্দশ-শতানন আদি-দেবঃ
শেষোঽধুনাপি সমবস্যতি নাস্য পারম্ ॥ ১৩ ॥

নান্তং বিদাম্যহমমী মুনয়োঽগ্রজাস্তে
মায়া-বলস্য পুরুষস্য কুতোঽবরা য়ে ।
গায়ন্ গুণান্ দশ-শতানন আদি-দেবঃ
শেষোঽধুনাপি সমবস্যতি নাস্য পারম্ ॥ ১৩ ॥

ন অন্তম্—कोई सीमा नहीं; **বিদামি**—जानता; **অহম্**—मैं; **অমী**—उन; **মুনয়ঃ**—महान् सन्त; **অগ্রজাঃ**—बड़े भाई; **তে**—आपके; **মায়া-বলস্য**—जिनकी विविध शक्तियाँ हैं; **পুরুষস্য**—परम भगवान् की; **কুতঃ**—किस प्रकार; **অবরাঃ**—कम बुद्धि वाले; **য়ে**—जो; **গায়ন্**—गाते हैं; **গুণান্**—गुणों को; **দশ-শত-আননঃ**—जिनके हजार फन हैं; **আদি-দেবঃ**—परम भगवान्; **শেষঃ**—अनन्त शेष; **অধুনা অপি**—अब तक भी; **সমবস্যতি**—पहुँचते; **ন**—नहीं; **অস্য**—भगवान् की; **পারম্**—सीमा।

अनुवाद

"'यदि मैं, ब्रह्मा तथा तुम्हारे बड़े भाई, महान् ऋषि तथा मुनि विविध शक्तियों से युक्त पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् का पार नहीं पा सकते, तो फिर उन्हें और कौन समझ सकता है? यद्यपि हजार फनों वाले भगवान् शेष

निरन्तर उनके दिव्य गुणों का कीर्तन करते हैं, फिर भी वे भगवान् के कार्यकलापों का अभी तक पार नहीं पा सके हैं।'

तात्पर्य

यह श्लोक नारद मुनि को कही गई ब्रह्माजी की उक्ति है और यह *श्रीमद्भागवत* (२.७.४१) से लिया गया है।

सेहो रहु—सर्वज्ञ-शिरोमणि श्री-कृष्ण ।
निज-गुणेर अन्त ना पाञा हयेन सतृष्ण ॥ १४॥

सेहो रहु—सर्वज्ञ-शिरोमणि श्री-कृष्ण ।
निज-गुणेर अन्त ना पाञा हयेन सतृष्ण ॥ १४॥

सेहो रहु—उन्हें (अनन्त को) छोड़ो; **सर्व-ज्ञ**—सब जानने वाले; **शिरोमणि**—सर्वश्रेष्ठ; **श्री-कृष्ण**—भगवान् कृष्ण; **निज-गुणेर**—अपने व्यक्तिगत गुणों की; **अन्त**—सीमा; **ना**—नहीं; **पाञा**—पाकर; **हयेन**—हो जाते हैं; **स-तृष्ण**—अत्यन्त उत्सुक।

अनुवाद

"अनन्तदेव को भी जाने दें, स्वयं भगवान् कृष्ण भी अपने दिव्य गुणों का अन्त नहीं पा सकते। निश्चय ही, वे स्वयं उन्हें जानने के लिए सदैव उत्सुक रहते हैं।

द्यु-पतय एव ते न ययुरन्तमनन्ततया
त्वमपि यदन्तराण्ड-निचया ननु सावरणाः ।
ख इव रजांसि वान्ति वयसा सह यच्छ्रुतयस्
त्वयि हि फलन्त्यतन्निरसनेन भवन्निधनाः ॥ १५॥

द्यु-पतय एव ते न ययुरन्तमनन्ततया
त्वमपि यदन्तराण्ड-निचया ननु सावरणाः ।
ख इव रजांसि वान्ति वयसा सह यच्छ्रुतयस्
त्वयि हि फलन्त्यतन्निरसनेन भवन्निधनाः ॥ १५॥

द्यु-पतयः—उच्च लोकों के अधिष्ठाता देवता (ब्रह्माजी तथा अन्य); **एव**—भी; **ते**—आपके; **न ययुः**—नहीं पहुँच सकते; **अन्तम्**—दिव्य गुणों की सीमा; **अनन्ततया**—असीमित

होने के कारण; **त्वम् अपि**—आप भी; **यत्**—क्योंकि; **अन्तर**—आपके भीतर; **अण्ड-निचयाः**—ब्रह्माण्डों के समूह; **ननु**—हे महाशय; **स-अवरणाः**—विभिन्न आवरणों से युक्त; **खे**—आकाश में; **इव**—जैसे; **रजांसि**—परमाणुओं को; **वान्ति**—घुमाता है; **वयसा**—समय के; **सह**—साथ; **यत्**—जो; **श्रुतयः**—वेदों को समझने वाले महात्मा; **त्वयि**—आप में; **हि**—निश्चित रूप से; **फलन्ति**—अन्त होता है; **अतन् निरसनेन**—निकृष्ट तत्त्वों का तिरस्कार करके; **भवत्-निधनाः**—जिनका निष्कर्ष आपमें है।

अनुवाद

"'हे प्रभु, आप अनन्त हैं। ब्रह्माजी समेत उच्चतर ग्रह-मण्डलों के प्रमुख आधिष्ठाता देवता भी आपका पार नहीं पा सकते। न ही स्वयं आप अपने गुणों की सीमा पा सकते हैं। आकाश में परमाणुओं की तरह सात आवरणों से युक्त असंख्य ब्रह्माण्ड हैं और वे सब कालक्रमानुसार घूम रहे हैं। वेदविद्या में निपुण सारे लोग भौतिक तत्त्वों का हटाते हुए आपको खोज रहे हैं। इस तरह लगातार खोज करते हुए वे इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि आपमें हर वस्तु पूर्ण है। इस तरह आप हर वस्तु के आश्रय हैं। यह समस्त वैदिक पण्डितों का निष्कर्ष है।'

तात्पर्य

यह श्लोक *श्रीमद्भागवत* (१०.८७.४१) का है, जो मूर्तिमान् वेदों द्वारा कहा गया था और जिसकी पुष्टि भगवान् कृष्ण द्वारा *भगवद्गीता* (७.१९) में की गई है :

बहूनां जन्मनामन्ते ज्ञानवान् मां प्रपद्यते।
वासुदेवः सर्वमिति स महात्मा सुदुर्लभः॥

"जो वास्तव में ज्ञानी है, वह अनेक जन्म-जन्मांतरों के बाद मुझे समस्त कारणों का कारण जानकर मेरी शरण में आता है। ऐसा महात्मा अत्यन्त दुर्लभ होता है।" ब्रह्माण्ड-भर में परम सत्य की खोज करने के बाद भी विद्वान तथा वैदिक पण्डित चरम लक्ष्य तक नहीं पहुँच पाते। अतः वे कृष्ण के पास आते हैं।

परम सत्य विषयक विवेचना करते समय हमेशा अनेक तर्क-वितर्क सामने आते हैं। ऐसे तर्कों का उद्देश्य सही निष्कर्ष तक पहुँचना होता है। ऐसा तर्क प्रायः *नेति नेति* कहलाता है ("यह नहीं; वह नहीं")। सही निष्कर्ष पर पहुँचने

तक सोचने की यह प्रक्रिया—"यह परम सत्य नहीं है, वह परम सत्य नहीं है," चलती रहती है। किन्तु सही निष्कर्ष पर पहुँचते ही हम पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् कृष्ण को परम सत्य के रूप में स्वीकार कर लेते हैं।

সেহ রহু—ব্রজে যবে কৃষ্ণ অবতার ।
তাঁর চরিত্র বিচারিতে মন না পায় পার ॥১৬॥

सेह रहु—व्रजे ग्रबे कृष्ण अवतार ।
ताँर चरित्र विचारिते मन ना पाय पार ॥ १६ ॥

सेह रहु—ऐसे नकारात्मक तर्क छोड़ो; **व्रजे**—वृन्दावन में; **ग्रबे**—जब; **कृष्ण**—भगवान् कृष्ण; **अवतार**—अवतरित होते हैं; **ताँर**—उनके; **चरित्र**—चरित्र; **विचारिते**—विचार करने का; **मन**—मन; **ना**—नहीं; **पाय**—पाता; **पार**—सीमा।

अनुवाद

"इन सारे तर्कों, न्याय, नकारात्मक अथवा सकारात्मक प्रक्रियाओं से अलग जब वृन्दावन में कृष्ण पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् के रूप में विद्यमान थे, तब उनके लक्षणों तथा कार्यकलापों का अध्ययन करके कोई उनकी शक्तियों का पार नहीं पा सका।

প্রাকৃতাপ্রাকৃত সৃষ্টি কৈলা এক-ক্ষণে ।
অশেষ-বৈকুণ্ঠাজাণ্ড স্ব-স্ব-নাথ-সনে ॥১৭॥

प्राकृताप्राकृत सृष्टि कैला एक-क्षणे ।
अशेष-वैकुण्ठाजाण्ड स्व-स्व-नाथ-सने ॥ १७ ॥

प्राकृत-अप्राकृत—भौतिक तथा आध्यात्मिक; **सृष्टि**—रचना; **कैला**—किये; **एक-क्षणे**—एक क्षण में; **अशेष**—असंख्य; **वैकुण्ठ**—वैकुण्ठ लोक; **अज-अण्ड**—भौतिक लोग; **स्व-स्व-नाथ-सने**—उनके अपने-अपने अधिष्ठाता देवताओं के साथ।

अनुवाद

"भगवान् ने वृन्दावन में समस्त भौतिक तथा आध्यात्मिक लोकों की रचना क्षण-भर में कर दी। उन सबकी सृष्टि उनके अधिष्ठाताओं समेत की गई।

এ-মত অন্যত্র নাহি শুনিয়ে অদ্ভুত ।
যাহার শ্রবণে চিত্ত হয় অবধূত ॥ ১৮॥

ए-मत अन्यत्र नाहि शुनिये अद्‌भुत ।
याहार श्रवणे चित्त हय अवधूत ॥ १८॥

ए-मत—इस तरह; **अन्यत्र**—कहीं और; **नाहि**—नहीं; **शुनिये**—मैं सुनता हूँ; **अद्‌भुत**—अद्‌भुत कार्यकलाप; **याहार**—जिनका; **श्रवणे**—श्रवण करके; **चित्त**—चेतना; **हय**—हो जाती है; **अवधूत**—उत्तेजित तथा शुद्ध।

अनुवाद

"हमें ऐसी अद्‌भुत बातें अन्यत्र सुनाई नहीं पड़तीं। उन घटनाओं के श्रवण मात्र से मनुष्य का चित्त उत्तेजित होकर विमल हो जाता है।

तात्पर्य

जब भगवान् कृष्ण इस धरा पर वृन्दावन में विद्यमान थे, तब ब्रह्माजी ने उन्हें सामान्य ग्वालबाल समझकर उनकी शक्ति की परीक्षा लेनी चाही। इसलिए उन्होंने कृष्ण के सारे बछड़ों और ग्वालबालों को चुरा लिया और अपनी माया से उन्हें छिपा दिया। जब कृष्ण ने देखा कि ब्रह्मा ने उनके सारे बछड़े तथा ग्वालबाल चुरा लिए हैं, तो उन्होंने तुरन्त ही ब्रह्मा के सामने ही अनेक भौतिक तथा आध्यात्मिक लोक उत्पन्न कर दिये। क्षण-भर में बछड़े, ग्वालबाल तथा अनन्त वैकुण्ठ भगवान् की आध्यात्मिक शक्ति के विस्तार रूप में प्रकट हो गये। जैसाकि *ब्रह्म-संहिता* में कहा गया है—*आनन्दचिन्मयरसप्रतिभाविताभिः ।* कृष्ण ने न केवल अपनी आध्यात्मिक शक्ति के समस्त साज-सामान ही उत्पन्न किये, अपितु उन्होंने असंख्य ब्रह्माओं सहित अनन्त भौतिक ब्रह्माण्डों की भी रचना कर दी। *श्रीमद्‌भागवत* में वर्णित इन सारी लीलाओं से मनुष्य का चित्त विमल होगा। इस तरह वह परम सत्य को वास्तव में समझ सकता है। आध्यात्मिक आकाश में आध्यात्मिक लोक वैकुण्ठ कहलाते हैं और इन सबके अपने-अपने विशिष्ट अधिष्ठाता (नारायण) अपने विशिष्ट नाम के साथ होते हैं। इसी तरह भौतिक आकाश में असंख्य ब्रह्माण्ड हैं और उनमें से प्रत्येक के अधिष्ठाता देव, ब्रह्मा होते हैं। क्षण-भर बाद जब ब्रह्मा लौटे, तो कृष्ण ने इन सारे वैकुण्ठों तथा ब्रह्माण्डों की सृष्टि एक ही साथ कर दी।

अवधूत शब्द का अर्थ है *क्षुब्ध, गतिमान, मग्न, पराजित। श्रीचैतन्य-चरितामृत* के कुछ संस्करणों में *याहार श्रवणे चित्तमल हय धूत* मिलता है। *अवधूत* के स्थान पर *हय धूत* शब्द आये हैं, जिनका अर्थ यह है कि हृदय या चेतना स्वच्छ हो जाती है। चेतना स्वच्छ हो जाने पर मनुष्य समझ सकता है कि कृष्ण क्या हैं और कौन हैं। इसकी पुष्टि *भगवद्गीता* (७.२८) में कृष्ण द्वारा भी होती है :

येषां त्वन्तगतं पापं जनानां पुण्यकर्मणाम्।
ते द्वन्द्वमोहनिर्मुक्ता भजन्ते मां दृढव्रताः॥

"जिन लोगों ने पूर्वजन्मों में तथा इस जन्म में पुण्यकर्म किये हैं और जिनके पापमय कृत्य पूरी तरह नष्ट हो चुके हैं, वे मोह के द्वैत से मुक्त हो जाते हैं और वे दृढ़ संकल्प के साथ मेरी सेवा में लग जाते हैं।" पापमय कृत्यों के फल से मुक्त हुए बिना कोई भी व्यक्ति न तो कृष्ण को समझ सकता है न उनकी दिव्य प्रेमाभक्ति में लग सकता है।

''कृष्ण-वत्सैरसङ्ख्यातैः''——शुकदेव-वाणी ।
कृष्ण-सङ्गे कत गोप——सङ्ख्या नाहि जानि ॥ १९॥

"कृष्ण-वत्सैरसङ्ख्यातैः"——शुकदेव-वाणी ।
कृष्ण-सङ्गे कत गोप——सङ्ख्या नाहि जानि ॥ १९॥

कृष्ण-वत्सैः असङ्ख्यातैः—कृष्ण असंख्य बछड़ों तथा ग्वालबालों के साथ रहते थे; **शुकदेव-वाणी**—शुकदेव गोस्वामी के वचन; **कृष्ण-सङ्गे**—भगवान् कृष्ण के साथ; **कत गोप**—कितने गोप सखा होते हैं; **सङ्ख्या**—गिनती; **नाहि जानि**—हम नहीं जानते।

अनुवाद

"शुकदेव गोस्वामी के अनुसार कृष्ण के पास अनन्त बछड़े तथा ग्वालबाल थे। उनकी सही-सही संख्या कोई नहीं गिन सकता था।

एक एक गोप करे यै वत्स चारण ।
कोटि, अर्बुद, शङ्ख, पद्म, ताहार गणन ॥ २०॥

एक एक गोप करे यै वत्स चारण ।
कोटि, अर्बुद, शङ्ख, पद्म, ताहार गणन ॥ २०॥

एक एक—एक के बाद एक; **गोप**—ग्वालबाल; **करे**—करता है; **ये**—जितने; **वत्स**—बछड़ों का; **चारण**—चराना; **कोटि**—१ करोड़; **अर्बुद**—१० करोड़; **शङ्ख**—१०० करोड़; **पद्म**—१० खरब; **ताहार गणन**—उनकी गणना।

अनुवाद

"हर ग्वालबाल करोड़, अर्बुद, शंख तथा पद्म तक की गिनती में बछड़े चरा रहा था। उनकी गणना की यही विधि है।

तात्पर्य

वैदिक गणित के अनुसार निम्नलिखित संख्या-पद्धति काम में लाई जाती है—इकाई, दहाई (दश), सैकड़ा (शत), हजार (सहस्र), दस हजार (अयुत), तथा लाख (लक्ष)। दस लाख बराबर एक *नियुत,* दस नियुत बराबर एक *कोटि,* तथा दस कोटि बराबर एक *अर्बुद* होता है। दस अर्बुद बराबर एक वृन्द, दस वृन्द बराबर एक *खर्व,* दस खर्व बराबर एक *निखर्व,* दस निखर्व बराबर एक *शंख,* दस शंख बराबर एक *पद्म* तथा दस पद्म बराबर एक *सागर* होता है। दस सागर बराबर एक *अन्त्य* और दस अन्त्य बराबर एक *मध्य* और दस *मध्य* बराबर एक *परार्ध* होता है। हर संख्या पिछली संख्या का दस गुना है। इस तरह कृष्ण के संगी सारे ग्वालबालों के पास चराने के लिए अनेक बछड़े थे।

वेत्र, वेणु, दल, शृङ्ग, वस्त्र, अलङ्कार ।
गोप-गणेर यत, तार नाहि लेखा-पार ॥२१॥

वेत्र, वेणु, दल, शृङ्ग, वस्त्र, अलङ्कार ।
गोप-गणेर यत, तार नाहि लेखा-पार ॥ २१ ॥

वेत्र—छड़ी; **वेणु**—बाँसुरियाँ; **दल**—कमलपुष्प; **शृङ्ग**—सींग का बाजा; **वस्त्र**—वस्त्र; **अलङ्कार**—आभूषण; **गोप-गणेर यत**—ग्वालबालों के पास जितने हैं; **तार**—उनकी; **नाहि**—नहीं है; **लेखा-पार**—लिखने की सीमा।

अनुवाद

"सारे ग्वालबालों के पास असंख्य बछड़े थे। इसी तरह उनकी छड़ियाँ, बाँसुरियाँ, कमल के फूल, सींग के बाजे, वस्त्र तथा आभूषण

भी असंख्य थे। उनके विषय में लिखकर उनकी संख्या सीमित नहीं की जा सकती।

सबे हैला चतुर्भुज वैकुण्ठेर पति ।
पृथक्पृथक्ब्रह्माण्डेर ब्रह्मा करे स्तुति ॥२२॥

सबे हैला चतुर्भुज वैकुण्ठेर पति ।
पृथक्-पृथक् ब्रह्माण्डेर ब्रह्मा करे स्तुति ॥ २२॥

सबे—वे सभी; **हैला**—हो गये; **चतुर्-भुज**—चार भुजाओं से युक्त; **वैकुण्ठेर पति**—वैकुण्ठ लोकों के स्वामी; **पृथक्-पृथक्**—अलग-अलग; **ब्रह्माण्डेर**—ब्रह्माण्डों के; **ब्रह्मा**—ब्रह्मा नामक अधिष्ठाता देवता; **करे स्तुति**—प्रार्थनाएँ करते हैं।

अनुवाद

"तब सारे ग्वालबाल वैकुण्ठपति चतुर्भुज नारायण बन गये, और विभिन्न ब्रह्माण्डों के पृथक्-पृथक् ब्रह्मा उन भगवानों की स्तुति करने लगे।

एक कृष्ण-देह हैते सबार प्रकाशे ।
क्षणेके सबाई सेई शरीरे प्रवेशे ॥२३॥

एक कृष्ण-देह हैते सबार प्रकाशे ।
क्षणेके सबाइ सेइ शरीरे प्रवेशे ॥ २३॥

एक—एक; **कृष्ण-देह**—कृष्ण के दिव्य शरीर; **हैते**—से; **सबार**—सभी का; **प्रकाशे**—प्राकट्य; **क्षणेके**—एक क्षण में; **सबाइ**—वे सभी; **सेइ शरीरे**—कृष्ण के शरीर में; **प्रवेशे**—प्रवेश कर जाते हैं।

अनुवाद

"ये सारे दिव्य शरीर कृष्ण के ही शरीर से उद्भूत हुए और क्षण-भर में ही वे सभी पुनः उनके शरीर में प्रवेश कर गये।

इहा देखि' ब्रह्मा हैला मोहित, विस्मित ।
स्तुति करि' एई पाछे करिला निश्चित ॥२४॥

इहा देखि' ब्रह्मा हैला मोहित, विस्मित ।
स्तुति करि' एइ पाछे करिला निश्चित ॥ २४॥

इहा देखि'—यह देखकर; **ब्रह्मा**—ब्रह्माजी; **हैला**—हो गये; **मोहित**—चकित; **विस्मित**—आश्चर्य से स्तब्ध; **स्तुति करि'**—प्रार्थनाएँ करके; **एइ**—यह; **पाछे**—अन्त में; **करिला**—किया; **निश्चित**—निष्कर्ष।

अनुवाद

"जब इस ब्रह्माण्ड के ब्रह्मा ने यह लीला देखी, तो वे आश्चर्यचकित हो गये। उन्होंने स्तुति करने के बाद यह निर्णय किया।

''যে কহে—'কৃষ্ণের বৈভব মুঞি সব জানোঁ' ।
সে জানুক,—কায়-মনে মুঞি এই মানোঁ ॥২৫॥

"য়ে কহে—'কৃষ্ণের বৈভব মুঞি সব জানোঁ' ।
সে জানুক,—কায়-মনে মুঞি এই মানোঁ ॥ ২৫॥

য়ে কহে—यदि कोई कहता है; **কৃষ্ণের**—भगवान् कृष्ण के; **বৈভব**—ऐश्वर्य; **মুঞি**—मैं; **সব**—सब; **জানোঁ**—जानता हूँ; **সে জানুক**—उसे जानने दो; **কায়-মনে**—अपने शरीर और मन से; **মুঞি**—मैं; **এই**—यह; **মানোঁ**—स्वीकार करता हूँ।

अनुवाद

"ब्रह्मा ने कहा, 'यदि कोई कहता है कि वह कृष्ण के ऐश्वर्यों के विषय में सब कुछ जानता है, तो वह भले ही ऐसा सोचता रहे। किन्तु जहाँ तक मेरा सम्बन्ध है, मैं तो अपने शरीर तथा मन से इस तरह मानता हूँ।

এই যে তোমার অনন্ত বৈভবামৃত-সিন্ধু ।
মোর বাঁ-মনো-গম্য নহে এক বিন্দু ॥২৬॥

এই য়ে তোমার অনন্ত বৈভবামৃত-সিন্ধু ।
মোর বাঙ্-মনো-গম্য নহে এক বিন্দু ॥ ২৬॥

এই য়ে—ये सब; **তোমার**—आपके; **অনন্ত**—असीमित; **বৈভব-অমৃত-সিন্ধু**—आपके ऐश्वर्य के अमृत का सागर की; **মোর**—मेरे; **বাক্-মনঃ-গম্য**—शब्दों तथा मन की पहुँच के भीतर; **নহে**—नहीं; **এক বিন্দু**—एक बूँद भी।

अनुवाद

"'हे प्रभु, आपका वैभव असीम अमृत सागर के समान है। मैं मौखिक रूप से या मानसिक रूप से इस सागर की एक बूँद का भी अनुभव नहीं कर सकता हूँ।

জানন্ত এব জানন্তু কিং বহূক্ত্যা ন মে প্রভো ।
মনসো বপুষো বাচো বৈভবং তব গোচরঃ ॥২৭॥

जानन्त एव जानन्तु किं बहूक्त्या न में प्रभो ।
मनसो वपुषो वाचो वैभवं तव गोचरः ॥ २७॥

जानन्तः—जो लोग सोचते हैं कि वे आपके अनन्त वैभवों को जानते हैं; **एव**—अवश्य; **जानन्तु**—उन्हें ऐसा सोचने दीजिये; **किम्**—क्या लाभ है; **बहु-उक्त्या**—अनेक बातों से; **न**—नहीं; **मे**—मेरा; **प्रभो**—हे प्रभु; **मनसः**—मन की; **वपुषः**—शरीर की; **वाचः**—वचनों की; **वैभवम्**—ऐश्वर्यों का; **तव**—आपकी; **गोचरः**—सीमा के भीतर।

अनुवाद

"'ऐसे लोग भी हैं, जो यह कहते हैं कि, "मैं कृष्ण के विषय में सब जानता हूँ।" उन्हें ऐसा सोचने दें। जहाँ तक मेरा सम्बन्ध है, मैं इस विषय में अधिक नहीं कहना चाहता। हे प्रभु, मुझे इतना ही कहने दें। जहाँ तक आपके वैभव का सम्बन्ध है, वे मेरे मन, शरीर तथा शब्दों की पहुँच के बाहर हैं।'

तात्पर्य

यह उद्धरण *श्रीमद्भागवत* (१०.१४.३८) का है, जिसे ब्रह्मा ने कृष्ण के बछड़ों तथा ग्वालबालों को चुरा लाने और कृष्ण द्वारा अपने वैभव के बल से उन चुराए बछड़ों तथा ग्वालबालों को अपने *विष्णुमूर्ति* विस्तारों द्वारा पुनः उत्पन्न किये जाने पर, प्रार्थना रूप में कहा था। इसे देखने के बाद ब्रह्मा ने उपर्युक्त प्रार्थना की।

কৃষ্ণের মহিমা রহু—কেবা তার জ্ঞাতা ।
বৃন্দাবন-স্থানের দেখ আশ্চর্য বিভুতা ॥২৮॥

कृष्णेर महिमा रहु——केबा तार ज्ञाता ।
वृन्दावन-स्थानेर देख आश्चर्य्य विभुता ॥ २८ ॥

कृष्णेर—भगवान् कृष्ण का; **महिमा**—महिमा; **रहु**—होने दो; **केबा**—जो; **तार**—उनको; **ज्ञाता**—जानने वाला; **वृन्दावन-स्थानेर**—कृष्ण के निवास, वृन्दावन का; **देख**—जरा देखो; **आश्चर्य्य**—अद्भुत; **विभुता**—ऐश्वर्य।

अनुवाद

"भगवान् कृष्ण की महिमा बनी रहे! भला उन सबसे अवगत कौन हो सकता है? उनके धाम वृन्दावन में अनेक अद्भुत वैभव हैं। कृपया उन्हें देखने का प्रयत्न तो करें।

षोल-क्रोश वृन्दावन,——शास्त्रेर प्रकाशे ।
तार एक-देशे वैकुण्ठाजाण्ड-गण भासे ॥ २९ ॥
षोल-क्रोश वृन्दावन,——शास्त्रेर प्रकाशे ।
तार एक-देशे वैकुण्ठाजाण्ड-गण भासे ॥ २९ ॥

षोल-क्रोश—१६ कोस (३२ मील); **वृन्दावन**—वृन्दावन धाम; **शास्त्रेर प्रकाशे**—शास्त्रों के वचनानुसार; **तार**—वृन्दावन के; **एक-देशे**—एक कोने में; **वैकुण्ठ**—सभी वैकुण्ठ लोक; **अजाण्ड-गण**—असंख्य ब्रह्माण्ड; **भासे**—स्थित हैं।

अनुवाद

"प्रामाणिक शास्त्रों के कथन के अनुसार वृन्दावन सोलह कोस तक (३२ मील) फैला हुआ है। फिर भी सारे वैकुण्ठ लोक तथा असंख्य ब्रह्माण्ड इस क्षेत्र के एक कोने में ही स्थित हैं।

तात्पर्य

व्रज की भूमि विभिन्न वनों में विभाजित है। ऐसे वनों की पूरी संख्या १२ है और इनका विस्तार ८४ कोस बतलाया जाता है। इनमें से विशेष वृन्दावन नामक वन वर्तमान वृन्दावन शहर से नन्दग्राम तक विस्तृत है। यह पूरा सोलह कोस या बत्तीस मील है।

अपार ऐश्वर्य कृष्णेर——नाहिक गणन ।
शाखा-चन्द्र-न्यायें करि दिग्दरशन ॥ ३० ॥

অপার ঐশ্বর্য্য কৃষ্ণের—নাহিক গণন ।
শাখা-চন্দ্র-ন্যায়ে করি দিগ্‌দরশন ॥ ৩০ ॥

अपार—असीमित; **ऐश्वर्य्य**—ऐश्वर्य; **कृष्णेर**—भगवान् कृष्ण का; **नाहिक गणन**—कोई अनुमान नहीं है; **शाखा-चन्द्र-न्याये**—पेड़ की शाखाओं के माध्यम से चन्द्र को देखने के न्याय द्वारा; **करि**—मैं करवाता हूँ; **दिक्-दरशन**—एक झलक मात्र।

अनुवाद

"कृष्ण के ऐश्वर्य का अनुमान लगा पाना किसी के लिए भी सम्भव नहीं है। वह असीम है। फिर भी जिस तरह वृक्ष की शाखाओं से होकर चन्द्रमा दिखता है, उसी तरह मैं संकेत मात्र करना चाहता हूँ।"

तात्पर्य

सबसे पहले बालक को वृक्ष की शाखाएँ दिखलाई जाती हैं, फिर उसे उन शाखाओं से होकर झाँकता चन्द्रमा दिखलाया जाता है। यह *शाखा-चन्द्र-न्याय* कहलाता है। भाव यह है कि पहले सरल उदाहरण प्रस्तुत करके तब कठिनतर पृष्ठभूमि की विवेचना की जाती है।

ঐশ্বর্য কহিতে স্ফুরিল ঐশ্বর্য-সাগর ।
মনেন্দ্রিয় ডুবিলা, প্রভু হইলা ফাঁপর ॥ ৩১ ॥

ঐশ্বর্য্য কহিতে স্ফুরিল ঐশ্বর্য্য-সাগর ।
মনেন্দ্রিয় ডুবিলা, প্রভু হইলা ফাঁপর ॥ ৩১ ॥

ऐश्वर्य्य—ऐश्वर्य; **कहिते**—वर्णन करते हुए; **स्फुरिल**—उत्पन्न हो गया; **ऐश्वर्य्य-सागर**—ऐश्वर्य का सागर; **मन-इन्द्रिय**—मन नामक मुख्य इन्द्रिय; **डुबिला**—निमग्न हो गई; **प्रभु**—श्री चैतन्य महाप्रभु; **हइला**—हो गये; **फाँपर**—विस्मित।

अनुवाद

"कृष्ण के दिव्य ऐश्वर्य का वर्णन करते हुए श्री चैतन्य महाप्रभु के मन में ऐश्वर्य का सागर लहराने लगा और उनका मन तथा उनकी इन्द्रियाँ उसी सागर में निमग्न हो गईं। इस तरह वे विक्षुब्ध हो उठे।

ভাগবতের এই শ্লোক পড়িলা আপনে ।
অর্থ আস্বাদিতে সুখে করেন ব্যাখ্যানে ॥ ৩২ ॥

भागवतेर एइ श्लोक पड़िला आपने ।
अर्थ आस्वादिते सुखे करेन व्याख्याने ॥ ३२ ॥

भागवतेर—*श्रीमद्भागवत* का; **एइ**—यह; **श्लोक**—श्लोक; **पड़िला**—उच्चारण किया; **आपने**—स्वयं; **अर्थ**—अर्थ; **आस्वादिते**—आस्वादन करने के लिए; **सुखे**—सुख में; **करेन व्याख्याने**—अर्थ वर्णन करने लगे।

अनुवाद

श्री चैतन्य महाप्रभु ने श्रीमद्भागवत का निम्नलिखित श्लोक स्वयं सुनाया और इसके अर्थ के आस्वादन के लिए वे स्वयं ही इसकी व्याख्या करने लगे।

स्वयं त्वसाम्यातिशयस्त्र्यधीशः
स्वाराज्य-लक्ष्म्याप्त-समस्त-कामः ।
बलिं हरद्भिश्चिर-लोक-पालैः
किरीट-कोटीड़ित-पाद-पीठः ॥ ३३ ॥

स्वयं त्वसाम्यातिशयस्त्र्यधीशः
स्वाराज्य-लक्ष्म्याप्त-समस्त-कामः ।
बलिं हरद्भिश्चिर-लोक-पालैः
किरीट-कोटीड़ित-पाद-पीठः ॥ ३३ ॥

स्वयम्—स्वयं परम भगवान्; **तु**—लेकिन; **असाम्य-अतिशयः**—जिनके समान तथा उनसे बढ़कर कोई नहीं है; **त्रि-अधीशः**—गोलोक वृन्दावन, वैकुण्ठ लोक तथा भौतिक जगत् नामक तीनों स्थानों के स्वामी, अथवा महाविष्णु, गर्भोदकशायी विष्णु तथा कारणोदकशायी विष्णु के स्वामी अथवा ब्रह्मा, विष्णु तथा महेश्वर के स्वामी, अथवा तीनों लोगों (उच्च, अधो तथा मध्य लोक) के स्वामी; **स्वाराज्य-लक्ष्मी**—अपनी आध्यात्मिक शक्ति द्वारा; **आप्त**—पहले से ही प्राप्त; **समस्त-कामः**—सभी इच्छित वस्तुएँ; **बलिम्**—उपहार या कर; **हरद्भिः**—जो दे रहे हैं; **चिर-लोक-पालैः**—विभिन्न लोकों के देवताओं द्वारा; **किरीट-कोटि**—करोड़ों मुकुटों द्वारा; **ईड़ित**—पूजित; **पाद-पीठः**—जिनके चरणकमल।

अनुवाद

"'पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् कृष्ण तीनों लोकों तथा तीन प्रमुख देवताओं (ब्रह्मा, विष्णु तथा शिव) के स्वामी हैं। कोई न तो उनके तुल्य है, न उनसे बढ़कर है। उनकी सारी इच्छाएँ उनकी आध्यात्मिक शक्ति

द्वारा जो स्वराज्य लक्ष्मी के नाम से जानी जाती है, पूरी होती हैं। सारे लोकों के अधिष्ठाता देव पूजा के समय अपना अपना कर चुकाते हैं तथा भेंटें प्रदान करते समय अपने मुकुटों से भगवान् के चरणकमलों का स्पर्श करते हैं। इस प्रकार वे उन भगवान् की स्तुति करते हैं।'

तात्पर्य

यह उद्धरण *श्रीमद्भागवत* (३.२.२१) का है।

परम ईश्वर कृष्ण स्वयं भगवान् ।
ताते बड़, ताँर सम केह नाहि आन ॥३४॥

परम ईश्वर कृष्ण स्वयं भगवान् ।
ताते बड़, ताँर सम केह नाहि आन ॥ ३४॥

परम—परम; **ईश्वर**—नियन्ता; **कृष्ण**—भगवान् कृष्ण; **स्वयम्**—स्वयं ही; **भगवान्**—वास्तविक भगवान्; **ताते**—इसलिए; **बड़**—सर्वश्रेष्ठ; **ताँर**—उनके; **सम**—समान; **केह**—कोई; **नाहि**—नहीं; **आन**—अन्य।

अनुवाद

"कृष्ण आदि पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् हैं; अतएव वे सबसे महान् हैं। न तो कोई उनके बराबर है, न कोई उनसे बढ़कर है।

ईश्वरः परमः कृष्णः सच्चिदानन्द-विग्रहः ।
अनादिरादिर्गोविन्दः सर्व-कारण-कारणम् ॥३५॥

ईश्वरः परमः कृष्णः सच्चिदानन्द-विग्रहः ।
अनादिरादिर्गोविन्दः सर्व-कारण-कारणम् ॥ ३५॥

ईश्वरः—नियन्ता; **परमः**—सर्वश्रेष्ठ; **कृष्णः**—भगवान् कृष्ण; **सत्**—शाश्वत अस्तित्व; **चित्**—परम ज्ञान; **आनन्द**—परम आनन्द; **विग्रहः**—जिनका स्वरूप; **अनादिः**—आरम्भ रहित; **आदिः**—सबके स्रोत; **गोविन्दः**—भगवान् गोविन्द; **सर्व-कारण-कारणम्**—सभी कारणों के कारण।

अनुवाद

"'गोविन्द नाम से विख्यात कृष्ण परम नियन्ता हैं। उनका शरीर

शाश्वत, आनन्दमय तथा आध्यात्मिक है। वे सबके उद्गम हैं। समस्त कारणों के कारण होने से उनका कोई अन्य उद्गम नहीं है।

तात्पर्य

यह श्लोक *ब्रह्म-संहिता* (५.१) का है।

ब्रह्मा, विष्णु, हर,——एइ सृष्ट्यादि-ईश्वर ।
तिने आज्ञाकारी कृष्णेर, कृष्ण——अधीश्वर ॥ ३६॥

ब्रह्मा, विष्णु, हर,——एइ सृष्ट्यादि-ईश्वर ।
तिने आज्ञाकारी कृष्णेर, कृष्ण——अधीश्वर ॥ ३६॥

ब्रह्मा—ब्रह्माजी; **विष्णु**—भगवान् विष्णु; **हर**—तथा शिवजी; **एइ**—ये; **सृष्टि-आदि-ईश्वर**—भौतिक सृष्टि, पालन, तथा विनाश के स्वामी; **तिने**—ये तीनों; **आज्ञा-कारी**—आज्ञापालक; **कृष्णेर**—भगवान् कृष्ण के; **कृष्ण**—भगवान् कृष्ण; **अधीश्वर**—उनके स्वामी।

अनुवाद

"इस भौतिक सृष्टि के मुख्य अधिष्ठाता देव ब्रह्मा, विष्णु तथा शिव हैं। फिर भी वे केवल भगवान् कृष्ण के आदेशों का पालन करते हैं, क्योंकि कृष्ण उन सबके स्वामी हैं।

सृजामि तन्नियुक्तोऽहं हरो हरति तद्वशः ।
विश्वं पुरुष-रूपेण परिपाति त्रि-शक्ति-धृक् ॥ ३७॥

सृजामि तन्नियुक्तोऽहं हरो हरति तद्वशः ।
विश्वं पुरुष-रूपेण परिपाति त्रि-शक्ति-धृक् ॥ ३७॥

सृजामि—रचना करता हूँ; **तत्-नियुक्तः**—उनके द्वारा नियुक्त; **अहम्**—मैं; **हरः**—शिवजी; **हरति**—नाश करते हैं; **तत्-वशः**—उनके नियन्त्रण में; **विश्वम्**—सम्पूर्ण जगत्; **पुरुष-रूपेण**—भगवान् विष्णु के रूप में; **परिपाति**—पालन करते हैं; **त्रि-शक्ति-धृक्**—भौतिक प्रकृति के तीन गुणों के स्वामी।

अनुवाद

"[ब्रह्माजी ने कहा :] 'पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् की इच्छानुसार मैं सृजन करता हूँ, शिवजी विनाश करते हैं और वे स्वयं क्षीरोदकशायी विष्णु के रूप में भौतिक प्रकृति के सारे कार्यकलापों का पालन करते

हैं। इस तरह भगवान् विष्णु भौतिक प्रकृति के तीनों गुणों के परम नियन्ता हैं।'

तात्पर्य

यह उद्धरण *श्रीमद्भागवत* (२.६.३२) से है।

এ সামান্য, ত্র্যধীশ্বরের শুন অর্থ আর ।
জগত্কারণ তিন পুরুষাবতার ॥৩৮॥

ए सामान्य, त्र्यधीश्वरेर शुन अर्थ आर ।
जगत्कारण तिन पुरुषावतार ॥ ३८ ॥

ए सामान्य—यह सामान्य वर्णन है; **त्रि-अधीश्वरेर**—तीनों लोकों के स्वामी का; **शुन**—कृपया सुनो; **अर्थ**—अर्थ; **आर**—दूसरा; **जगत्-कारण**—भौतिक संसार के कारण; **तिन**—तीन; **पुरुष-अवतार**—विष्णु के पुरुषावतार।

अनुवाद

"यह तो एक सामान्य विवरण मात्र है। अब कृपया त्र्यधीश का दूसरा अर्थ समझने का प्रयास करें। विष्णु के तीन पुरुष अवतार भौतिक सृष्टि के मूल कारण हैं।

মহা-বিষ্ণু, পদ্মনাভ, ক্ষীরোদক-স্বামী ।
এই তিন—স্থূল-সূক্ষ্ম-সর্ব-অন্তর্যামী ॥৩৯॥

महा-विष्णु, पद्मनाभ, क्षीरोदक-स्वामी ।
एइ तिन—स्थूल-सूक्ष्म-सर्व-अन्तर्यामी ॥ ३९ ॥

महा-विष्णु—महाविष्णु; **पद्मनाभ**—पद्मनाभ (गर्भोदकशायी विष्णु); **क्षीर-उदक-स्वामी**—क्षीरोदकशायी विष्णु; **एइ तिन**—ये तीनों; **स्थूल-सूक्ष्म**—स्थूल तथा सूक्ष्म; **सर्व**—सभी के; **अन्तर्यामी**—परमात्मा।

अनुवाद

"महाविष्णु, पद्मनाभ तथा क्षीरोदकशायी विष्णु, ये तीनों ही समस्त स्थूल तथा सूक्ष्म अस्तित्व के परमात्मा हैं।

तात्पर्य

भगवान् महाविष्णु सबके परमात्मा हैं और कारणोदकशायी विष्णु कहलाते

हैं। गर्भोदकशायी विष्णु, जिनके नाभिपद्म से ब्रह्मा उत्पन्न हुए, हिरण्यगर्भ भी कहलाते हैं और वे पूर्ण परमात्मा तथा सूक्ष्म परमात्मा हैं। क्षीरोदकशायी विष्णु ही विराट् रूप तथा स्थूल परमात्मा हैं।

एइ तिन—सर्वाश्रय, जगतीश्वर ।
एहो सब कला-अंश, कृष्ण—अधीश्वर ॥ ४० ॥

एइ तिन—सर्वाश्रय, जगतीश्वर ।
एहो सब कला-अंश, कृष्ण—अधीश्वर ॥ ४० ॥

एइ तिन—ये तीनों; **सर्व-आश्रय**—समस्त भौतिक सृष्टि के आश्रय; **जगत्-ईश्वर**—विश्व के परम नियन्ता; **एहो सब**—ये सभी; **कला-अंश**—अंश या अंश के अंश, कला; **कृष्ण**—भगवान् कृष्ण; **अधीश्वर**—पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान्।

अनुवाद

"यद्यपि महाविष्णु, पद्मनाभ तथा क्षीरोदकशायी विष्णु सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड के आश्रय तथा अधीश्वर (नियन्ता) हैं, फिर भी वे कृष्ण के पूर्ण अंश या पूर्ण अंश के भी अंश हैं। अतएव वे आदि भगवान् हैं।

यस्यैक-निश्वसित-कालमथावलम्ब्य
जीवन्ति लोम-विल-जा जगदण्ड-नाथाः ।
विष्णुर्महान्स इह यस्य कला-विशेषो
गोविन्दमादि-पुरुषं तमहं भजामि ॥ ४१ ॥

यस्यैक-निश्वसित-कालमथावलम्ब्य
जीवन्ति लोम-विल-जा जगदण्ड-नाथाः ।
विष्णुर्महान्स इह यस्य कला-विशेषो
गोविन्दमादि-पुरुषं तमहं भजामि ॥ ४१ ॥

यस्य—जिनकी; **एक**—एक; **निश्वसित**—श्वास का; **कालम्**—समय; **अथ**—इस प्रकार; **अवलम्ब्य**—की शरण लेकर; **जीवन्ति**—जीते हैं; **लोम-विल-जाः**—बालों के छिद्रों से उत्पन्न; **जगत्-अण्ड-नाथाः**—ब्रह्माण्डों के स्वामी (ब्रह्माओं); **विष्णुः महान्**—परम भगवान् महाविष्णु; **सः**—वे; **इह**—यहाँ; **यस्य**—जिनके; **कला-विशेषः**—विशेष विस्तार या कला; **गोविन्दम्**—भगवान् गोविन्द को; **आदि-पुरुषम्**—आदि पुरुष को; **तम्**—उनको; **अहम्**—मैं; **भजामि**—भजता हूँ।

अनुवाद

"'ब्रह्मा तथा संसारों के अन्य स्वामी महाविष्णु के रोमकूपों से प्रकट होते हैं और उनके एक निश्वास की अवधि तक जीवित रहते हैं। मैं आदि भगवान् गोविन्द की वन्दना करता हूँ, क्योंकि महाविष्णु इनके पूर्ण अंश के अंश हैं।'

तात्पर्य

यह उद्धरण *ब्रह्म-संहिता* (५.४८) का है। देखें आदिलीला ५.७१ भी।

এই অর্থ—মধ্যম, শুন 'গূঢ়' অর্থ আর ।
তিন আবাস-স্থান কৃষ্ণের শাস্ত্রে খ্যাতি যার ॥ ৪২ ॥

এই অর্থ—মধ্যম, শুন 'গূঢ়' অর্থ আর ।
তিন আবাস-স্থান কৃষ্ণের শাস্ত্রে খ্যাতি যার ॥ ৪২ ॥

এই অর্থ—यह व्याख्या; **মধ্যম**—माध्यमिक; **শুন**—कृपया सुनो; **গূঢ়**—गुह्य; **অর্থ**—अर्थ; **আর**—दूसरा; **তিন**—तीन; **আবাস-স্থান**—निवासस्थान; **কৃষ্ণের**—भगवान् कृष्ण के; **শাস্ত্রে**—प्रामाणिक शास्त्रों में; **খ্যাতি**—प्रसिद्धि; **যার**—जिनकी।

अनुवाद

"यह तो मध्यम अर्थ है। अब इसका गुह्य अर्थ सुनो। भगवान् कृष्ण के तीन निवासस्थान हैं, जो प्रामाणिक शास्त्रों से भलीभाँति जाने जाते हैं।

तात्पर्य

कृष्ण के तीन धाम हैं—उनका अन्तरंग धाम (गोलोक वृन्दावन), उनका मध्यम आवास (परव्योम) तथा उनका बाह्य आवास (यह भौतिक जगत्)।

'অন্তঃপুর'—গোলোক-শ্রী-বৃন্দাবন ।
যাহাঁ নিত্য-স্থিতি মাতা-পিতা-বন্ধু-গণ ॥ ৪৩ ॥

'অন্তঃপুর'—গোলোক-শ্রী-বৃন্দাবন ।
যাহাঁ নিত্য-স্থিতি মাতা-পিতা-বন্ধু-গণ ॥ ৪৩ ॥

অন্তঃ-পুর—आन्तरिक निवास; **গোলোক-শ্রী-বৃন্দাবন**—गोलोक वृन्दावन; **যাহাঁ**—

जहाँ; **नित्य-स्थिति**—नित्य निवास करते हैं; **माता-पिता**—माता तथा पिता; **बन्धु-गण**—तथा मित्रगण।

अनुवाद

"अन्तरंग आवास (अन्तःपुर) गोलोक वृन्दावन कहलाता है। यहीं पर कृष्ण के अपने सखा, पार्षद, पिता तथा माता रहते हैं।

मधुरैश्वर्य-माधुर्य-कृपादि-भाण्डार ।
योगमाया दासी याहाँ रासादि लीला-सार ॥ ४४॥

मधुरैश्वर्य-माधुर्य-कृपादि-भाण्डार ।
योगमाया दासी याहाँ रासादि लीला-सार ॥ ४४॥

मधुर-ऐश्वर्य—माधुर्य तथा ऐश्वर्य का; **माधुर्य**—माधुर्य प्रेम का; **कृपा-आदि**—तथा कृपा आदि का; **भाण्डार**—भण्डार गृह; **योग-माया**—आध्यात्मिक शक्ति; **दासी**—सेविका; **याहाँ**—जहाँ; **रास-आदि**—रास नृत्य तथा अन्य लीलाएँ; **लीला-सार**—सभी लीलाओं का सार।

अनुवाद

"वृन्दावन कृष्ण की कृपा का एवं माधुर्य-प्रेम के मधुर वैभव का भण्डार है। यहीं पर आध्यात्मिक शक्ति दासी बनकर समस्त लीलाओं के सार रासनृत्य का प्रदर्शन करती है।

करुणा-निकुरम्ब-कोमले
मधुरैश्वर्य-विशेष-शालिनि ।
जयति व्रज-राज-नन्दने
न हि चिन्ता-कणिकाभ्युदेति नः ॥ ४५॥

करुणा-निकुरम्ब-कोमले
मधुरैश्वर्य-विशेष-शालिनि ।
जयति व्रज-राज-नन्दने
न हि चिन्ता-कणिकाभ्युदेति नः ॥ ४५॥

करुणा-निकुरम्ब-कोमले—महान् करुणा के कारण जो बहुत कोमल हैं; **मधुर-ऐश्वर्य-विशेष-शालिनि**—विशेष रूप से माधुर्य प्रेम के ऐश्वर्य द्वारा; **जयति**—जय हो; **व्रज-**

राज-नन्दने—महाराज नन्द के पुत्र की; **न**—नहीं; **हि**—अवश्य; **चिन्ता**—चिन्ता; **कणिका**—एक कण मात्र भी; **अभ्युदेति**—जागृत; **नः**—हमें।

अनुवाद

"'परमेश्वर की कृपा के कारण वृन्दावन धाम अत्यन्त कोमल है और माधुर्य-प्रेम के कारण यह विशेष रूप से ऐश्वर्ययुक्त है। यहाँ पर महाराज नन्द के पुत्र की दिव्य महिमाओं का प्रदर्शन होता है। ऐसी दशा में हमारे भीतर थोड़ी-सी भी चिन्ता उत्पन्न नहीं होती।'

তার তলে পরব্যোম——'বিষ্ণুলোক'-নাম ।
নারায়ণ-আদি অনন্ত স্বরূপের ধাম ॥ ৪৬॥

তার তলে পরব্যোম——'বিষ্ণুলোক'-নাম ।
নারায়ণ-আদি অনন্ত স্বরূপের ধাম ॥ ৪৬ ॥

তার তলে—वृन्दावन धाम के नीचे; **पर-व्योम**—आध्यात्मिक आकाश; **विष्णु-लोक-नाम**—विष्णुलोक नामक; **नारायण-आदि**—नारायण आदि; **अनन्त**—असंख्य; **स्वरूपेर**—स्वरूप विस्तार के; **धाम**—निवासस्थान।

अनुवाद

"वृन्दावन लोक के नीचे परव्योम है, जो विष्णु-लोक कहलाता है। यहाँ पर असंख्य वैकुण्ठ लोक हैं, जिनका नियन्त्रण नारायण तथा कृष्ण के अन्य असंख्य विस्तारों द्वारा किया जाता है।

'মধ্যম-আবাস' কৃষ্ণের——ষড়্-ঐশ্বর্য-ভাণ্ডার ।
অনন্ত স্বরূপে যাহাঁ করেন বিহার ॥ ৪৭॥

'মধ্যম-আবাস' কৃষ্ণের——ষড়্-ঐশ্বর্য্য-ভাণ্ডার ।
অনন্ত স্বরূপে য়াহাঁ করেন বিহার ॥ ৪৭ ॥

मध्यम-आवास—मध्यम निवास; **कृष्णेर**—भगवान् कृष्ण का; **षट्-ऐश्वर्य्य-भाण्डार**—छः ऐश्वर्यों का भण्डार गृह; **अनन्त स्वरूपे**—असंख्य रूपों में; **य्याहाँ**—जहाँ; **करेन विहार**—अपनी लीलाओं का आस्वादन करते हैं।

अनुवाद

"परव्योम जो कि छहों ऐश्वर्यों से पूर्ण है, भगवान् कृष्ण का मध्यम

आवास है। यहीं पर कृष्ण के अनन्त रूप अपनी लीला का विलास करते हैं।

अनन्त वैकुण्ठ याहाँ भाण्डार-कोठरि ।
पारिषद-गणे षड्-ऐश्वर्ये आछे भरि' ॥ ४८ ॥

अनन्त वैकुण्ठ याहाँ भाण्डार-कोठरि ।
पारिषद-गणे षड्-ऐश्वर्ये आछे भरि' ॥ ४८ ॥

अनन्त—असंख्य; **वैकुण्ठ**—वैकुण्ठ लोक; **याहाँ**—जहाँ; **भाण्डार-कोठरि**—एक खजाने के घर के कमरों जैसे; **पारिषद-गणे**—नित्य संगी; **षट्-ऐश्वर्ये**—छः ऐश्वर्यों पूर्ण; **आछे**—हैं; **भरि'**—भरकर।

अनुवाद

"यहाँ पर असंख्य वैकुण्ठ लोक हैं, जो कोषागार की विभिन्न कोठरियों के समान हैं और समस्त ऐश्वर्यों से पूरित हैं। इन असंख्य लोकों में छः ऐश्वर्यों से समृद्ध कृष्ण के नित्य संगी बसते हैं।

गोलोक-नाम्नि निज-धाम्नि तले च तस्य
देवी-महेश-हरि-धामसु तेषु तेषु ।
ते ते प्रभाव-निचया विहिताश्च येन
गोविन्दमादि-पुरुषं तमहं भजामि ॥ ४९ ॥

गोलोक-नाम्नि निज-धाम्नि तले च तस्य
देवी-महेश-हरि-धामसु तेषु तेषु ।
ते ते प्रभाव-निचया विहिताश्च येन
गोविन्दमादि-पुरुषं तमहं भजामि ॥ ४९ ॥

गोलोक-नाम्नि निज-धाम्नि—पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् के अपने निवास गोलोक वृन्दावन नामक लोक में; **तले**—नीचे; **च**—भी; **तस्य**—उसके; **देवी**—दुर्गा देवी का; **महेश**—शिवजी का; **हरि**—नारायण का; **धामसु**—लोकों में; **तेषु तेषु**—उनमें से प्रत्येक में; **ते ते**—वे सभी; **प्रभाव-निचयाः**—ऐश्वर्य; **विहिताः**—स्थित; **च**—तथा; **येन**—जिनके द्वारा; **गोविन्दम्**—उन गोविन्द को; **आदि-पुरुषम्**—आदि पुरुष को; **तम्**—उनको; **अहम्**—मैं; **भजामि**—भजता हूँ।

अनुवाद

"'गोलोक वृन्दावन धाम के नीचे देवी-धाम, महेश-धाम तथा हरि-धाम नामक लोक हैं। वे विभिन्न प्रकार से ऐश्वर्यपूर्ण हैं। उनकी व्यवस्था आदि पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् गोविन्द द्वारा की जाती है। मैं उन भगवान् को सादर नमस्कार करता हूँ।'

तात्पर्य

यह उद्धरण *ब्रह्म-संहिता* (५.४३) का है।

प्रधान-परम-व्योमोरन्तरे विरजा नदी ।
वेदाङ्ग-स्वेद-जनितैस्तोयैः प्रस्राविता शुभा ॥५०॥

प्रधान-परम-व्योम्नोरन्तरे विरजा नदी ।
वेदाङ्ग-स्वेद-जनितैस्तोयैः प्रस्राविता शुभा ॥५०॥

प्रधान-परम-व्योम्नोः अन्तरे—भौतिक तथा आध्यात्मिक जगतों के मध्य; **विरजा नदी**—विरजा नामक नदी; **वेद-अङ्ग**—पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् के दिव्य शरीर के; **स्वेद-जनितैः**—पसीने द्वारा उत्पन्न; **तोयैः**—जल द्वारा; **प्रस्राविता**—बहती है; **शुभा**—शुभकारी।

अनुवाद

"'आध्यात्मिक तथा भौतिक जगतों के बीच विरजा नदी है। यह जल पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् वेदाङ्ग के शरीर से निकले पसीने से उत्पन्न है। इस प्रकार यह नदी प्रवाहित होती है।'

तात्पर्य

यह श्लोक तथा अगला श्लोक *पद्म-पुराण* से हैं।

तस्याः पारे पर-व्योम त्रि-पाद्भूतं सनातनम् ।
अमृतं शाश्वतं नित्यमनन्तं परमं पदम् ॥५१॥

तस्याः पारे पर-व्योम त्रि-पाद्भूतं सनातनम् ।
अमृतं शाश्वतं नित्यमनन्तं परमं पदम् ॥५१॥

तस्याः पारे—विरजा नदी के दूसरे किनारे पर; **पर-व्योम**—आध्यात्मिक आकाश; **त्रि-पात्-भूतम्**—परम भगवान् के ऐश्वर्यों का तीन चौथाई भाग; **सनातनम्**—नित्य; **अमृतम्**—

क्षय से रहित; **शाश्वतम्**—काल के प्रभाव से मुक्त; **नित्यम्**—सर्वदा रहने वाला; **अनन्तम्**—असीमित; **परमम्**—सर्वश्रेष्ठ; **पदम्**—धाम।

अनुवाद

"'विरजा नदी से आगे आध्यात्मिक प्रकृति है, जो अखंड, नित्य, अव्यय तथा असीम है। यह परम धाम है, जहाँ भगवान् का तीन चौथाई ऐश्वर्य विद्यमान है। यह परव्योम अर्थात् आध्यात्मिक आकाश कहलाता है।'

तात्पर्य

आध्यात्मिक आकाश में न तो चिन्ता है, न भय है। यह शाश्वत है और भगवान् की तीन चौथाई शक्ति से बना है। भौतिक जगत् भगवान् की केवल एक चौथाई शक्ति का प्राकट्य है। इसीलिए यह *एकपादविभूति* कहलाता है।

তার তলে 'বাহ্যাবাস' বিরজার পার ।
অনন্ত ব্রহ্মাণ্ড যাহাঁ কোঠরি অপার ॥৫২॥

তার তলে 'বাহ্যাবাস' বিরজার পার ।
অনন্ত ব্রহ্মাণ্ড য়াহাঁ কোঠরি অপার ॥৫২॥

তার তলে—আধ্যাত্মিক जगत् के नीचे; **বাহ্য-আবাস**—बाहरी निवास; **বিরজার পার**—विरजा नदी के दूसरे किनारे पर; **অনন্ত ব্রহ্মাণ্ড**—असंख्य ब्रह्माण्ड; **য়াহাঁ**—जहाँ; **কোঠরি**—कक्ष; **অপার**—असीमित।

अनुवाद

"विरजा नदी के उस पार बाह्य आवास है, जो अनन्त ब्रह्माण्डों से पूर्ण है और प्रत्येक ब्रह्माण्ड में असंख्य प्रकार के आवास हैं।

'দেবী-ধাম' নাম তার, জীব যার বাসী ।
জগল্লক্ষ্মী রাখি' রহে যাহাঁ মায়া দাসী ॥৫৩॥

'দেবী-ধাম' নাম তার, জীব য়ার বাসী ।
জগল্লক্ষ্মী রাখি' রহে য়াহাঁ মায়া দাসী ॥৫৩॥

দেবী-ধাম—बहिरंगा शक्ति का स्थान; **নাম**—नामक; **তার**—उसका; **জীব**—जीवात्मायें;

याँर—जिसके; **वासी**—निवासी; **जगत्-लक्ष्मी**—भौतिक शक्ति; **राखि'**—रखकर; **रहे**—रहती है; **याहाँ**—जिसमें; **माया**—बहिरंगा शक्ति; **दासी**—सेविका।

अनुवाद

"बहिरंगा शक्ति का आवास देवी-धाम कहलाता है और इसके निवासी बद्धात्माएँ हैं। यहीं पर भौतिक शक्ति दुर्गा अनेक ऐश्वर्यशाली दासियों के साथ निवास करती हैं।

तात्पर्य

चूँकि बद्धात्मा भौतिक शक्ति (माया) का भोग करना चाहता है, इसलिए उसे देवी-धाम में रहने दिया जाता है, जहाँ दुर्गा देवी भगवान् की दासी बनकर उनके आदेशों का पालन करती हैं। भौतिक शक्ति *जगल्लक्ष्मी* कहलाती है, क्योंकि वह मोहग्रस्त बद्ध आत्माओं की रक्षा करती है। इसीलिए देवी दुर्गा भौतिक माता कहलाती हैं और उनके पति शिवजी भौतिक पिता कहलाते हैं। देवी दुर्गा का यह नाम इसलिए पड़ा, क्योंकि यह भौतिक जगत् एक महान् दुर्ग या किले की तरह है, जहाँ बद्ध आत्मा उनकी देखरेख में रखा गया है। बद्ध आत्मा भौतिक सुविधाओं के लिए देवी दुर्गा को प्रसन्न करना चाहता है और माता दुर्गा उसे सारी सुविधाएँ प्रदान करती हैं। इसलिए बद्ध आत्मा मोहित रहते हैं और बहिरंगा शक्ति को छोड़ना नहीं चाहते। फलस्वरूप वे यहाँ शान्ति तथा सुखपूर्वक रहने के लिए योजनाएँ बनाते हैं। ऐसा है यह भौतिक जगत्।

এই তিন ধামের হয় কৃষ্ণ অধীশ্বর ।
গোলোক-পরব্যোম——প্রকৃতির পর ॥৫৪॥

এइ तिन धामेर हय कृष्ण अधीश्वर ।
गोलोक-परव्योम——प्रकृतिर पर ॥५४॥

एइ तिन धामेर—इन तीन धामों या निवासस्थानों के—गोलोक वृन्दावन, वैकुण्ठ धाम (हरि धाम) तथा देवी धाम (भौतिक जगत्)); **हय**—हैं; **कृष्ण**—भगवान् कृष्ण; **अधीश्वर**—परम स्वामी; **गोलोक-परव्योम**—गोलोक नामक आध्यात्मिक लोक तथा आध्यात्मिक आकाश; **प्रकृतिर पर**—इस भौतिक प्रकृति से परे।

अनुवाद

"कृष्ण सारे धामों के परम स्वामी हैं, जिनमें गोलोक-धाम, वैकुण्ठ-

धाम तथा देवी-धाम सम्मिलित हैं। परव्योम तथा गोलोक-धाम इस भौतिक जगत् देवी-धाम से परे हैं।

तात्पर्य

जब कोई जीव देवी-धाम से मुक्त हो जाता है, किन्तु हरि-धाम के वैभव को नहीं जानता तो उसे महेश-धाम में रखा जाता है, जो इन दोनों धामों के बीच में है। वहाँ पर मुक्त आत्मा को पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् की सेवा करने का अवसर प्राप्त नहीं होता; अतः महेश-धाम शिवजी का धाम होते हुए भी तथा देवी-धाम के ऊपर होते हुए भी आध्यात्मिक जगत् नहीं होता। आध्यात्मिक जगत् का आरम्भ हरि-धाम या वैकुण्ठ लोक से होता है।

चिच्छक्ति-विभूति-धाम—त्रिपादैश्वर्य-नाम ।
मायिक विभूति—एक-पाद अभिधान ॥ ५५ ॥

चिच्छक्ति-विभूति-धाम—त्रिपादैश्वर्य-नाम ।
मायिक विभूति—एक-पाद अभिधान ॥ ५५ ॥

चित्-शक्ति—आध्यात्मिक शक्ति का; **विभूति-धाम**—ऐश्वर्यपूर्ण धाम; **त्रि-पाद्**—तीन-चौथाई; **ऐश्वर्य्य**—ऐश्वर्य; **नाम**—नामक; **मायिक विभूति**—भौतिक ऐश्वर्य; **एक-पाद**—एक चौथाई; **अभिधान**—जाना जाता है।

अनुवाद

"आध्यात्मिक जगत् को पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् की शक्ति तथा ऐश्वर्य का तीन चौथाई भाग (त्रिपाद) माना जाता है, जबकि यह भौतिक जगत् केवल एक चौथाई (एक पाद) शक्ति होता है। यही हमारी जानकारी है।

तात्पर्य

हरि-धाम (परव्योम) तथा गोलोक वृन्दावन भौतिक जगत् से परे हैं। इन्हें भगवान् की तीन चौथाई शक्ति माना जाता है। भौतिक जगत्, जिसका संचालन भगवान् की बहिरंगा शक्ति द्वारा होता है, देवी-धाम कहलाता है और यह भगवान् की एक चौथाई शक्ति का प्राकट्य है।

त्रि-पाद्विभूतेर्धामत्वाच्त्रि-पाद्भूतं हि तत्पदम् ।
विभूतिर्मायिकी सर्वा प्रोक्ता पादात्मिका यतः ॥५६॥

त्रि-पाद्विभूतेर्धामत्वात्त्रि-पाद्भूतं हि तत्पदम् ।
विभूतिर्मायिकी सर्वा प्रोक्ता पादात्मिका यतः ॥५६॥

त्रि-पात्-विभूतेः—शक्ति के तीन चौथाई हिस्से का; **धामत्वात्**—धाम होने के कारण; **त्रि-पात्-भूतम्**—तीन चौथाई शक्ति से युक्त; **हि**—निश्चित रूप से; **तत् पदम्**—वह धाम; **विभूतिः**—शक्ति; **मायिकी**—भौतिक; **सर्वा**—सारी; **प्रोक्ता**—कही जाती है; **पाद-आत्मिका**—एक चौथाई; **यतः**—इसलिए।

अनुवाद

"'चूँकि आध्यात्मिक जगत् भगवान् की तीन चौथाई शक्ति से बना है, इसलिए यह त्रिपादभूत कहलाता है। भौतिक जगत् भगवान् की एक चौथाई शक्ति से बना होने के कारण एकपाद कहलाता है।'

तात्पर्य

यह श्लोक *लघु भागवतामृत* (१.५.५६३) का है।

त्रिपाद-विभूति कृष्णेर——वाक्य-अगोचर ।
एक-पाद विभूतिर शुनह विस्तार ॥५७॥

त्रिपाद-विभूति कृष्णेर——वाक्य-अगोचर ।
एक-पाद विभूतिर शुनह विस्तार ॥५७॥

त्रि-पाद-विभूति कृष्णेर—भगवान् कृष्ण की शक्ति का तीन चौथाई; **वाक्य-अगोचर**—शब्दों द्वारा अवर्णनीय; **एक-पाद विभूतिर**—एक चौथाई विभूति का; **शुनह**—सुनो; **विस्तार**—विस्तार।

अनुवाद

"भगवान् की तीन चौथाई शक्ति हमारी वर्णन शक्ति के परे है। अतः उनकी शेष एक चौथाई शक्ति के विषय में विस्तार से सुनें।

अनन्त ब्रह्माण्डेर यत ब्रह्मा-रुद्र-गण ।
चिर-लोक-पाल-शब्दे ताहार गणन ॥५८॥

अनन्त ब्रह्माण्डेर यत ब्रह्मा-रुद्र-गण ।
चिर-लोक-पाल-शब्दे ताहार गणन ॥ ५८ ॥

अनन्त—असीमित; **ब्रह्माण्डेर**—ब्रह्माण्डों के; **यत**—सभी; **ब्रह्मा**—ब्रह्माओं; **रुद्र-गण**—तथा शिवजी; **चिर-लोक-पाल**—जगतों के स्थाई नियन्त्रक; **शब्दे**—शब्दों से; **ताहार**—उनकी; **गणन**—गिनती।

अनुवाद

"वास्तव में ब्रह्माण्डों की वास्तविक संख्या का पता लगा पाना बहुत कठिन है। प्रत्येक ब्रह्माण्ड के अपने-अपने ब्रह्मा तथा शिव होते हैं, जो चिर लोकपाल कहलाते हैं। इसलिए इनकी भी कोई गिनती नहीं है।

तात्पर्य

ब्रह्मा तथा शिव को *चिरलोकपाल* अर्थात् स्थायी राज्यपाल कहा गया है। इसका अर्थ यह हुआ कि वे सृष्टि के आदि से अन्त तक ब्रह्माण्ड के कार्यकलापों का निरीक्षण करते हैं। हो सकता है कि अगली सृष्टि में ये ही जीव विद्यमान न हों, किन्तु ब्रह्मा तथा शिव आदि से अन्त तक रहते हैं, इसलिए वे चिरलोकपाल अर्थात् स्थायी शासनकर्ता कहलाते हैं। *लोकपाल* का अर्थ है "अधिष्ठाता देव।" प्रमुख स्वर्गलोकों के आठ लोकपाल हैं, जिनके नाम हैं इन्द्र, अग्नि, यम, वरुण, निर्ऋति, वायु, कुवेर तथा शिव।

एक-दिन द्वारकाते कृष्ण देखिवारे ।
ब्रह्मा आइला,—द्वार-पाल जानाइल कृष्णेरे ॥ ५९ ॥
एक-दिन द्वारकाते कृष्ण देखिबारे ।
ब्रह्मा आइला,—द्वार-पाल जानाइल कृष्णेरे ॥ ५९ ॥

एक-दिन—एक दिन; **द्वारकाते**—द्वारका में; **कृष्ण देखिबारे**—कृष्ण के दर्शन करने के लिए; **ब्रह्मा आइला**—ब्रह्माजी आये; **द्वार-पाल**—द्वारपाल; **जानाइल**—जानकारी दी; **कृष्णेरे**—भगवान् कृष्ण को।

अनुवाद

"एक बार जब कृष्ण द्वारका में राज्य कर रहे थे, तब ब्रह्माजी उन्हें मिलने आये और द्वारपाल ने तुरन्त ही कृष्ण को ब्रह्माजी के आगमन की जानकारी दी।

কৃষ্ণ কহেন—'কোন্ব্রহ্মা, কি নাম তাহার?' ।
দ্বারী আসি' ব্রহ্মারে পুছে আর বার ॥৬০॥

কৃষ্ণ কহেন—'কোন্ ব্রহ্মা, কি নাম তাহার?' ।
দ্বারী আসি' ব্রহ্মারে পুছে আর বার ॥৬০॥

কৃষ্ণ কহেন—कृष्ण ने कहा; **কোন্ ব্রহ্মা**—कौन से ब्रह्मा; **কি নাম তাহার**—उसका नाम क्या है; **দ্বারী আসি'**—द्वारपाल वापस आकर; **ব্রহ্মারে**—ब्रह्माजी से; **পুছে**—पूछता है; **আর বার**—फिर।

अनुवाद

"जब कृष्ण को यह बताया गया, तो उन्होंने तुरन्त ही द्वारपाल से पूछा, 'कौन से ब्रह्मा? उनका नाम क्या है?' अतः द्वारपाल लौट गया और उसने ब्रह्मा से पूछा।

तात्पर्य

इस श्लोक से हमें पता चलता है कि ब्रह्मा एक पद का नाम है और उस पद पर प्रतिष्ठित व्यक्ति का भी एक नाम होता है। *भगवद्गीता* में कहा गया है—*इमं विवस्वते योगम्।* विवस्वान् नाम है सूर्य ग्रह के वर्तमान अधिष्ठाता देव का। सामान्यतया वह सूर्य या सूर्यदेव कहलाता है, लेकिन उसका अपना विशिष्ट नाम भी होता है। किसी राज्य का गवर्नर सामान्यतः राजपाल कहलाता है, किन्तु उसका अपना व्यक्तिगत नाम भी होता है। चूँकि विभिन्न नामों वाले लाखों ब्रह्मा हैं, अतः कृष्ण ने जानना चाहा कि उनमें से कौन-सा ब्रह्मा उनसे मिलने आया है।

বিস্মিত হঞা ব্রহ্মা দ্বারীকে কহিলা ।
'কহ গিয়া সনক-পিতা চতুর্মুখ আইলা' ॥৬১॥

বিস্মিত হঞা ব্রহ্মা দ্বারীকে কহিলা ।
'কহ গিয়া সনক-পিতা চতুর্মুখ আইলা' ॥৬১॥

বিস্মিত হঞা—आश्चर्यचकित होकर; **ব্রহ্মা**—ब्रह्माजी; **দ্বারীকে**—द्वारपाल से; **কহিলা**—बोले; **কহ**—बताओ; **গিয়া**—जाकर; **সনক-পিতা**—चार कुमारों के पिता; **চতুর্-মুখ**—चार मुख वाले; **আইলা**—आये हैं।

अनुवाद

"जब द्वारपाल ने पूछा, 'कौन से ब्रह्मा?' तो ब्रह्मा को आश्चर्य हुआ। उन्होंने द्वारपाल से कहा, 'जाकर भगवान् कृष्ण को सूचित करो कि चारों कुमारों के पिता चतुर्मुख ब्रह्मा आये हैं।'

कृष्ण जानाञा द्वारी ब्रह्मारे लञा गेला ।
कृष्णेर चरणे ब्रह्मा दण्डवत्कैला ॥६२॥

कृष्णे जानाञा—भगवान् कृष्ण को सूचित करके; **द्वारी**—द्वारपाल; **ब्रह्मारे**—ब्रह्माजी को; **लञा**—लेकर; **गेला**—गया; **कृष्णेर चरणे**—भगवान् कृष्ण के चरणकमलों में; **ब्रह्मा**—ब्रह्माजी ने; **दण्डवत् कैला**—प्रणाम किया।

अनुवाद

"तब द्वारपाल ने भगवान् कृष्ण से ब्रह्मा का विवरण बतलाया और भगवान् कृष्ण ने उसे आज्ञा दी कि उन्हें भीतर आने दिया जाए। द्वारपाल ब्रह्मा को भीतर ले गया और ज्योंही ब्रह्मा ने भगवान् कृष्ण को देखा, उन्होंने उनके चरणकमलों में नमस्कार किया।

कृष्ण मान्य-पूजा करि' ताँरे प्रश्न कैल ।
'कि लागि' तोमार इहाँ आगमन हैल?' ॥६३॥

कृष्ण मान्य-पूजा करि' ताँरे प्रश्न कैल ।
'कि लागि' तोमार इहाँ आगमन हैल?' ॥६३॥

कृष्ण—भगवान् कृष्ण; **मान्य-पूजा**—आदर तथा पूजा; **करि'**—करके; **ताँरे**—उनसे; **प्रश्न कैल**—प्रश्न किया; **कि लागि'**—किस कारण; **तोमार**—आपका; **इहाँ**—यहाँ; **आगमन हैल**—आना हुआ।

अनुवाद

"ब्रह्मा द्वारा पूजा किये जाने के बाद भगवान् कृष्ण ने भी उपयुक्त शब्दों से उनका सम्मान किया। तब भगवान् कृष्ण ने उनसे पूछा, 'आप यहाँ किस लिए आये हैं?'

ब्रह्मा कहे,—'ताहा पाछे करिब निवेदन ।
एक संशय मने हय, करह छेदन ॥ ६४ ॥
ब्रह्मा कहे,—'ताहा पाछे करिब निवेदन ।
एक संशय मने हय, करह छेदन ॥ ६४ ॥

ब्रह्मा कहे—ब्रह्माजी ने कहा; **ताहा**—वह; **पाछे**—बाद में; **करिब निवेदन**—मैं आपको निवेदन करूँगा; **एक**—एक; **संशय**—सन्देह; **मने**—मन में; **हय**—है; **करह छेदन**—कृपया इसे दूर कीजिये।

अनुवाद

"पूछे जाने पर ब्रह्माजी ने तुरन्त उत्तर दिया, 'यह तो मैं बाद में बतलाऊँगा कि मैं किस लिए आया हूँ। पहले तो मेरे मन में एक सन्देह है, जिसे मैं चाहता हूँ कि आप कृपया दूर कर दें।

'कोन्ब्रह्मा?' पुछिले तुमि कोनभिप्राये? ।
आमा वइ जगते आर कोन्ब्रह्मा हये?' ॥ ६५ ॥
'कोन् ब्रह्मा?' पुछिले तुमि कोन् अभिप्राये? ।
आमा बइ जगते आर कोन् ब्रह्मा हये?' ॥ ६५ ॥

कोन् ब्रह्मा—कौन सा ब्रह्मा; **पुछिले तुमि**—आपने पूछा; **कोन् अभिप्राये**—किस अभिप्राय से; **आमा बइ**—मेरे अलावा; **जगते**—इस ब्रह्माण्ड में; **आर**—दूसरा; **कोन्**—कौन; **ब्रह्मा**—ब्रह्मा; **हये**—है।

अनुवाद

"'आपने यह क्यों पूछा कि कौन-सा ब्रह्मा आपको मिलने आया है? ऐसे प्रश्न का क्या अभिप्राय है? क्या इस ब्रह्माण्ड के भीतर मेरे अतिरिक्त कोई अन्य ब्रह्मा भी है?'

शुनि' हासि' कृष्ण तबे करिलेन ध्याने ।
असङ्ख्य ब्रह्मार गण आइला तत-क्षणे ॥ ६६ ॥
शुनि' हासि' कृष्ण तबे करिलेन ध्याने ।
असङ्ख्य ब्रह्मार गण आइला तत-क्षणे ॥ ६६ ॥

शुनि'—सुनकर; **हासि'**—हँसकर; **कृष्ण**—भगवान् कृष्ण; **तबे**—तब; **करिलेन**—किया; **ध्याने**—ध्यान; **असङ्ख्य**—असंख्य; **ब्रह्मार**—ब्रह्माओं के; **गण**—समूह; **आइला**—आ गये; **तत-क्षणे**—उसी समय।

अनुवाद

"यह सुनकर श्रीकृष्ण मुस्कुराये और तुरन्त ध्यानमग्न हो गये। देखते ही देखते वहाँ असंख्य ब्रह्मा आ गये।

दश-बिश-शत-सहस्र-अयुत-लक्ष-बदन ।
कोट्यर्बुद मुख कारो, ना याय गणन ॥६७॥

दश-बिश-शत-सहस्र-अयुत-लक्ष-वदन ।
कोट्यर्बुद मुख कारो, ना याय गणन ॥६७॥

दश—दस; **बिश**—बीस; **शत**—सौ; **सहस्र**—हजार; **अयुत**—१० हजार; **लक्ष**—एक लाख; **वदन**—मुख; **कोटि**—करोड़; **अर्बुद**—अरब; **मुख**—मुख; **कारो**—उनमें से कुछ की; **ना याय गणन**—गिनती सम्भव नहीं।

अनुवाद

"इन ब्रह्माओं के शिरों की संख्या भिन्न-भिन्न थी। किसी के दस शिर थे, तो किसी के बीस, किसी के सौ शिर थे तो किसी के हजार, किसी के दस हजार तो किसी के एक लाख, किसी के एक करोड़ तथा किसी के एक अर्बुद शिर थे। उनके मुखों की संख्या की गणना कोई नहीं कर सकता।

रुद्र-गण आइला लक्ष कोटि-बदन ।
इन्द्र-गण आइला लक्ष कोटि-नयन ॥६८॥

रुद्र-गण आइला लक्ष कोटि-वदन ।
इन्द्र-गण आइला लक्ष कोटि-नयन ॥६८॥

रुद्र-गण—शिव; **आइला**—आये; **लक्ष कोटि-वदन**—लाखों और करोड़ों मुखों से युक्त; **इन्द्र-गण**—इन्द्र; **आइला**—आये; **लक्ष**—लाखों; **कोटि**—करोंड़ो; **नयन**—आँखों वाले।

अनुवाद

"उस समय वहाँ अनेक शिव भी आये, जिनके लाखों तथा करोड़ों विविध शिर थे। अनेक इन्द्र भी आये और इनके भी सारे शरीरों में लाखों-करोड़ों आँखें थीं।

तात्पर्य

कहा जाता है कि स्वर्ग का राजा इन्द्र बड़ा कामी है। एक बार उसने एक महर्षि की पत्नी के साथ संभोग किया, किन्तु जब महर्षि को इसका पता चला, तो उन्होंने कामी इन्द्र को शाप दिया कि उसके शरीर-भर में योनियाँ हो जाएँ। इन्द्र अत्यन्त लज्जित होकर उस महर्षि के चरणकमलों पर गिर पड़ा और उनकी क्षमा माँगी। दयार्द्र होकर महर्षि ने योनियों को आँखों में परिणत कर दिया। इसलिए इन्द्र के सारे शरीर में लाखों-करोड़ों आँखें हैं। जिस तरह ब्रह्मा तथा शिव के अनेक शिर हैं, उसी प्रकार इन्द्र की अनेक आँखें हैं।

देखि' चतुर्मुख ब्रह्मा फाँपर हइला ।
हस्ति-गण-मध्ये येन शशक रहिला ॥ ६९ ॥

देखि'—देखकर; **चतुर्-मुख ब्रह्मा**—इस ब्रह्माण्ड के चार मुख वाले ब्रह्माजी; **फाँपर हइला**—हैरान रह गये; **हस्ति-गण-मध्ये**—अनेक हाथियों के बीच; **येन**—जिस प्रकार; **शशक**—एक खरगोश; **रहिला**—रहता है।

अनुवाद

"जब इस ब्रह्माण्ड के चतुर्मुख ब्रह्मा ने कृष्ण का इतना सारा वैभव देखा, तो वे हैरान रह गये और उन्होंने अपने आपको अनेक हाथियों के बीच एक खरगोश के समान समझा।

आसि' सब ब्रह्मा कृष्ण-पाद-पीठ-आगे ।
दण्डवत्करिते मुकुट पाद-पीठे लागे ॥ ७० ॥

आसि' सब ब्रह्मा कृष्ण-पाद-पीठ-आगे ।
दण्डवत् करिते मुकुट पाद-पीठे लागे ॥ ७० ॥

आसि'—आकर; **सब ब्रह्मा**—सभी ब्रह्मा; **कृष्ण-पाद-पीठ-आगे**—कृष्ण के चरणकमलों के सामने; **दण्डवत् करिते**—प्रणाम करते हुए; **मुकुट**—उनके मुकुट; **पाद-पीठे**—चरणकमलों पर; **लागे**—स्पर्श हुए।

अनुवाद

"जितने भी ब्रह्मा कृष्ण को मिलने आये, उन सबने उनके चरणकमलों में नमस्कार किया और जब उन्होंने ऐसा किया, तो उनके मुकुटों ने भगवान् के चरणकमलों का स्पर्श किया।

कृष्णेर अचिन्त्य-शक्ति लखिते केह नारे ।
यत ब्रह्मा, तत मूर्ति एक-इ शरीरे ॥७१॥

कृष्णेर अचिन्त्य-शक्ति लखिते केह नारे ।
यत ब्रह्मा, तत मूर्ति एक-इ शरीरे ॥७१॥

कृष्णेर—भगवान् कृष्ण की; **अचिन्त्य-शक्ति**—अचिन्तय शक्तियाँ; **लखिते**—अनुमान करने में; **केह**—कोई भी; **नारे**—समर्थ नहीं है; **यत ब्रह्मा**—सभी ब्रह्मा; **तत मूर्ति**—अनेक रूपों में; **एक-इ शरीरे**—एक ही शरीर में।

अनुवाद

"भगवान् कृष्ण की अचिन्त्य शक्ति का अनुमान कोई भी नहीं लगा सकता। वहाँ जितने ब्रह्मा थे, वे सभी कृष्ण के एक ही शरीर में स्थित थे।

पाद-पीठ-मुकुटाग्र-सङ्घट्टे उठे ध्वनि ।
पाद-पीठे स्तुति करे मुकुट हेन जानि' ॥७२॥

पाद-पीठ-मुकुटाग्र-सङ्घट्टे उठे ध्वनि ।
पाद-पीठे स्तुति करे मुकुट हेन जानि' ॥७२॥

पाद-पीट—कृष्ण के चरणकमलों में; **मुकुट-अग्र**—मुकुटों के अग्रभागों की; **सङ्घट्टे**—एक साथ; **उठे ध्वनि**—ध्वनि निकली; **पाद-पीठे स्तुति**—चरणकमलों में प्रार्थनाएँ; **करे**—करते; **मुकुट**—मुकुट स्वयं; **हेन जानि'**—ऐसा प्रतीत हो रहा था।

अनुवाद

"जब सारे मुकुट कृष्ण के चरणकमलों पर एकसाथ टकराए, तो

तुमुल ध्वनि उत्पन्न हुई। ऐसा लग रहा था, मानों स्वयं मुकुट कृष्ण के चरणकमलों की स्तुति कर रहे हों।

যোড়-হাতে ব্রহ্মা-রুদ্রাদি করয়ে স্তবন ।
''বড় কৃপা করিলা প্রভু, দেখাইলা চরণ ॥৭৩॥
য়োড়-হাতে ব্রহ্মা-রুদ্রাদি করয়ে স্তবন ।
"বড় কৃপা করিলা প্রভু, দেখাইলা চরণ ॥৭৩॥

য়োড়-হাতে—हाथ जोड़कर; **ब्रह्मा**—ब्रह्माजी; **रुद्र-आदि**—शिवजी तथा अन्य; **करये स्तवन**—स्तुतियाँ कर रहे थे; **बड़ कृपा**—अति कृपा; **करिला**—आपने की है; **प्रभु**—हे प्रभु; **देखाइला चरण**—आपने अपने चरणकमलों के दर्शन करवाये हैं।

अनुवाद

"हाथ जोड़े सारे ब्रह्मा तथा शिव कृष्ण की स्तुति करने लगे, 'हे प्रभु, आपने हम पर बड़ी कृपा की है। हम आपके चरणकमलों का दर्शन पाने में समर्थ हो सके।'

ভাগ্য, মোরে বোলাইলা 'দাস' অঙ্গীকরি' ।
কোনাজ্ঞা হয়, তাহা করি শিরে ধরি''' ॥৭৪॥
ভাগ্য, মোরে বোলাইলা 'দাস' অঙ্গীকরি' ।
কোনাজ্ঞা হয়, তাহা করি শিরে ধরি''' ॥৭৪॥

भाग्य—महान् सौभाग्य; **मोरे**—मेरा; **बोलाइला**—आपने बुलाया; **दास**—एक सेवक; **अङ्गीकरि'**—मानकर; **कोन् आज्ञा हय**—आपका क्या आदेश है; **ताहा**—वह; **करि**—स्वीकार करता हूँ; **शिरे धरि'**—उसे अपने मस्तक पर धारण कर।

अनुवाद

"तब सबने कहा, 'यह मेरा परम सौभाग्य है कि आपने मुझे अपना दास समझकर बुलाया है। अब बतायें कि आपकी क्या आज्ञा है, जिसे मैं शिरोधार्य करूँ।'

কৃষ্ণ কহে,—তোমা-সবা দেখিতে চিত্ত হৈল ।
তাহা লাগি' এক ঠাঞি সবা বোলাইল ॥৭৫॥

कृष्ण कहे,—तोमा-सबा देखिते चित्त हैल ।
ताहा लागि' एक ठाञि सबा बोलाइल ॥ ७५ ॥

कृष्ण कहे—भगवान् कृष्ण ने कहा; **तोमा-सबा**—आप सबको; **देखिते**—देखने की; **चित्त हैल**—इच्छा हुई; **ताहा लागि'**—इस कारण; **एक ठाञि**—एक स्थान में; **सबा**—आप सबको; **बोलाइल**—मैंने बुलाया।

अनुवाद

"भगवान् कृष्ण ने उत्तर दिया, 'चूँकि मैं तुम सबको एक साथ देखना चाहता था, इसलिए मैंने तुम सबको यहाँ बुलाया है।

সুখী হও সবে, কিছু নাহি দৈত্য-ভয়? ।
তারা কহে,—'তোমার প্রসাদে সর্বত্র-ই জয় ॥ ৭৬ ॥
सुखी हओ सबे, किछु नाहि दैत्य-भय? ।
तारा कहे,—'तोमार प्रसादे सर्वत्र-इ जय ॥ ७६ ॥

सुखी हओ—सुखी रहिये; **सबे**—आप सभी; **किछु**—कोई; **नाहि**—नहीं है; **दैत्य-भय**—असुरों का डर; **तारा कहे**—सबने उत्तर दिया; **तोमार प्रसादे**—आपकी कृपा से; **सर्वत्र-इ**—सब जगह; **जय**—विजयी हैं।

अनुवाद

"'तुम सभी सुखी हो। क्या असुरों से तुमको कोई डर है?' "उन्होंने उत्तर दिया, 'आपकी कृपा से हम सर्वत्र विजयी होते हैं।

সম্প্রতি পৃথিবীতে যেবা হৈয়াছিল ভার ।
অবতীর্ণ হঞা তাহা করিলা সংহার' ॥ ৭৭ ॥
सम्प्रति पृथिवीते येबा हैयाछिल भार ।
अवतीर्ण हञा ताहा करिला संहार' ॥ ७७ ॥

सम्प्रति—वर्तमान में; **पृथिवीते**—पृथ्वी पर; **येबा**—जो भी; **हैयाछिल**—हुआ था; **भार**—बोझ; **अवतीर्ण हञा**—अवतार लेकर; **ताहा**—वह; **करिला संहार**—आपने समाप्त कर दिया है।

अनुवाद

"'पृथ्वी पर जो कुछ भार था, उसे आपने उसी ग्रह पर अवतरित होकर दूर कर दिया है।'

द्वारकादि—विभु, तार एई त प्रमाण ।
'आमार-ई ब्रह्माण्डे कृष्ण' सबार हैल ज्ञान ॥७८॥

द्वारकादि—विभु, तार एइ त प्रमाण ।
'आमार-इ ब्रह्माण्डे कृष्ण' सबार हैल ज्ञान ॥७८॥

द्वारका-आदि—द्वारका धाम तथा अन्य धाम; **विभु**—दिव्य स्थान; **तार एइ त प्रमाण**—यह उसका प्रमाण है; **आमार-इ ब्रह्माण्डे**—मेरे ब्रह्माण्ड में; **कृष्ण**—अभी कृष्ण उपस्थित हैं; **सबार**—उन सभी को; **हैल ज्ञान**—यह ज्ञान था।

अनुवाद

"यह द्वारका के वैभव का प्रमाण है : सारे ब्रह्माओं ने सोचा, 'अभी कृष्ण मेरे क्षेत्र में विराजमान हैं।'

कृष्ण-सह द्वारका-वैभव अनुभव हैल ।
एकत्र मिलने केह काहो ना देखिल ॥७९॥

कृष्ण-सह द्वारका-वैभव अनुभव हैल ।
एकत्र मिलने केह काहो ना देखिल ॥७९॥

कृष्ण-सह—कृष्ण के साथ; **द्वारका-वैभव**—द्वारका का ऐश्वर्य; **अनुभव हैल**—अनुभव हुआ; **एकत्र मिलने**—यद्यपि एक साथ आये थे; **केह**—कोई भी; **काहो**—किसी दूसरे और को; **ना देखिल**—नहीं देख पाया।

अनुवाद

"इस तरह हर एक ने द्वारका के वैभव को देखा। यद्यपि वे सभी वहाँ एकत्र थे, किन्तु किसी ने अपने सिवा अन्य किसी को नहीं देखा।

तात्पर्य

चतुर्मुख ब्रह्मा ने द्वारकाधाम का वैभव देखा, जहाँ कृष्ण रह रहे थे। यद्यपि वहाँ पर दस से लेकर करोड़ शिरों वाले ब्रह्मा उपस्थित थे और यद्यपि अनेक शिवजी भी उपस्थित थे, किन्तु इस ब्रह्माण्ड के चतुर्मुख ब्रह्मा ही उन सबको

देख सकते थे। कृष्ण की अचिन्त्य शक्ति के कारण अन्य सभी एक दूसरे को नहीं देख सके। यद्यपि सारे ब्रह्मा तथा शिव वहाँ साथ में एकत्र थे, किन्तु कृष्ण की शक्ति के कारण वे परस्पर न तो मिल सके, न एक दूसरे से बातें कर सके।

तबे कृष्ण सर्व-ब्रह्मा-गणे विदाय दिला ।
दण्डवत् हञा सबे निज घरे गेला ॥ ८० ॥

तबे कृष्ण सर्व-ब्रह्मा-गणे विदाय दिला ।
दण्डवत् हञा सबे निज घरे गेला ॥ ८० ॥

तबे—उसके बाद; **कृष्ण**—भगवान् कृष्ण ने; **सर्व-ब्रह्मा-गणे**—सभी ब्रह्माओं को; **विदाय दिला**—विदा दी; **दण्डवत् हञा**—प्रणाम करके; **सबे**—वे सभी; **निज घरे गेला**—अपने-अपने घर लौट गये।

अनुवाद

"तब कृष्ण ने सभी ब्रह्माओं को विदा किया और वे सब नमस्कार करके अपने-अपने घर चले गये।

देखि' चतुर्मुख ब्रह्मार हैल चमत्कार ।
कृष्णेर चरणे आसि' कैला नमस्कार ॥ ८१ ॥

देखि' चतुर्मुख ब्रह्मार हैल चमत्कार ।
कृष्णेर चरणे आसि' कैला नमस्कार ॥ ८१ ॥

देखि'—देखकर; **चतुर्-मुख ब्रह्मार**—इस ब्रह्माण्ड के चार सिर वाले ब्रह्मा को; **हैल**—हो गया; **चमत्कार**—आश्चर्य; **कृष्णेर चरणे आसि'**—भगवान् कृष्ण के चरणकमलों में आकर; **कैला नमस्कार**—प्रणाम किया।

अनुवाद

"इतना सारा वैभव देखकर इस ब्रह्माण्ड के चार शिरों वाले ब्रह्मा आश्चर्यचकित रह गये। पुनः कृष्ण के चरणकमलों के पास आकर उन्होंने नमस्कार किया।

ब्रह्मा बले,—पूर्वे आमि ये निश्चय करिलुँ ।
तार उदाहरण आमि आजि त' देखिलुँ ॥ ८२ ॥

ब्रह्मा बले,—पूर्वे आमि ग्रे निश्चय करिलुँ ।
तार उदाहरण आमि आजि त' देखिलुँ ॥ ८२ ॥

ब्रह्मा बले—ब्रह्माजी ने कहा; **पूर्वे**—पहले; **आमि**—मैंने; **ग्रे**—जो कुछ भी; **निश्चय करिलुँ**—निश्चय किया था; **तार**—उसका; **उदाहरण**—उदाहरण; **आमि**—मैंने; **आजि**—आज; **त'**—निश्चित रूप से; **देखिलुँ**—देखा है।

अनुवाद

"तब ब्रह्मा ने कहा, 'इसके पूर्व मैंने अपने ज्ञान के विषय में जो निश्चय किया था, उसकी सम्पुष्टि मैंने आज स्वयं कर ली है।

জানন্ত এব জানন্তু কিং বহূক্ত্যা ন মে প্রভো ।
মনসো বপুষো বাচো বৈভবং তব গোচরঃ ॥ ৮৩ ॥

जानन्त एव जानन्तु किं बहूक्त्या न मे प्रभो ।
मनसो वपुषो वाचो वैभवं तव गोचरः ॥ ८३ ॥

जानन्तः—जो लोग सोचते हैं कि वे आपकी अनन्त शक्तियों को जानते हैं; **एव**—निश्चित् रूप से; **जानन्तु**—उन्हें ऐसा सोचने दो; **किम्**—क्या लाभ है; **बहु-उक्त्या**—अनेक बातों से; **न**—नहीं; **मे**—मेरे; **प्रभो**—हे मेरे प्रभु; **मनसः**—मन की; **वपुषः**—शरीर की; **वाचः**—शब्दों की; **वैभवम्**—ऐश्वर्य; **तव**—आपके; **गोचरः**—सीमा के भीतर।

अनुवाद

"'ऐसे लोग भी हैं, जो यह कहते हैं कि, "मैं कृष्ण के विषय में सब जानता हूँ।" वे भले ही ऐसा सोचते रहें। जहाँ तक मेरा सवाल है, मैं इस विषय में अधिक नहीं कहना चाहता। हे प्रभु, मुझे इतना ही कहने दें। जहाँ तक आपके ऐश्वर्यों का सम्बन्ध है, वे सब मेरे मन, शरीर तथा वाणी की पहुँच से बाहर हैं।'

तात्पर्य

यह उद्धरण *श्रीमद्भागवत* (१०.१४.३८) में ब्रह्मा के कथन के रूप में आया है।

কৃষ্ণ কহে, ''এই ব্রহ্মাণ্ড পঞ্চাশৎকোটি যোজন ।
অতি ক্ষুদ্র, তাতে তোমার চারি বদন ॥ ৮৪ ॥

कृष्ण कहे, "एइ ब्रह्माण्ड पञ्चाशत्कोटि योजन ।
अति क्षुद्र, ताते तोमार चारि वदन ॥ ८४ ॥

कृष्ण कहे—कृष्ण ने कहा; **एइ ब्रह्माण्ड**—यह ब्रह्माण्ड; **पञ्चाशत् कोटि योजन**—४ अरब मील; **अति क्षुद्र**—अत्यन्त छोटे; **ताते**—इसलिए; **तोमार**—आपके; **चारि वदन**—चार सिर।

अनुवाद

"कृष्ण ने कहा, 'तुम्हारे ब्रह्माण्ड का व्यास ४ अरब मील तक का है, अतएव यह सारे ब्रह्माण्डों में सबसे छोटा है। इसलिए तुम्हारे केवल चार सिर हैं।

तात्पर्य

अपने काल के सबसे बड़े ज्योतिर्विद श्रील भक्तिसिद्धान्त सरस्वती ठाकुर ने *सिद्धान्त-शिरोमणि* के आधार पर यह जानकारी दी है कि इस ब्रह्माण्ड का माप १८,७१२,०६९,२००,०००,००० × ८ मील है। यह इस ब्रह्माण्ड की परिधि है। कुछ लोगों के अनुसार यह केवल आधी परिधि है।

कोन ब्रह्माण्ड शत-कोटि, कोन लक्ष-कोटि ।
कोन नियुत-कोटि, कोन कोटि-कोटि ॥ ८५ ॥

कोन ब्रह्माण्ड शत-कोटि, कोन लक्ष-कोटि ।
कोन नियुत-कोटि, कोन कोटि-कोटि ॥ ८५ ॥

कोन ब्रह्माण्ड—कुछ ब्रह्माण्ड; **शत-कोटि**—१ अरब योजन; **कोन**—कुछ; **लक्ष-कोटि**—१०० अरब (१ खरब) योजन; **कोन**—कोई; **नियुत-कोटि**—१० खरब; **कोन**—कोई; **कोटि-कोटि**—१०० खरब।

अनुवाद

"'कुछ ब्रह्माण्ड व्यास (डायमीटर) में सौ करोड़ (१ बिलियन) योजन, कोई एक लाख करोड़ योजन, तो कोई दस लाख करोड़ योजन, तो कोई-कोई करोड़-करोड़ योजन के हैं। इस तरह उनका क्षेत्रफल लगभग अनन्त है।

तात्पर्य

एक योजन आठ मील के बराबर होता है।

ब्रह्माण्डानुरूप ब्रह्मार शरीर-वदन ।
एइ-रूपे पालि आमि ब्रह्माण्डेर गण ॥ ८६॥

ब्रह्माण्डानुरूप ब्रह्मार शरीर-वदन ।
एइ-रूपे पालि आमि ब्रह्माण्डेर गण ॥ ८६॥

ब्रह्माण्ड-अनुरूप—एक ब्रह्माण्ड के आकार के अनुसार; **ब्रह्मार**—ब्रह्माजी के; **शरीर-वदन**—शरीर पर मस्तक हैं; **एइ-रूपे**—इस प्रकार; **पालि आमि**—मैं पालन करता हूँ; **ब्रह्माण्डेर गण**—ब्रह्माण्डों के सभी असंख्य समूहों का।

अनुवाद

"'ब्रह्माण्ड के आकार के अनुसार ही ब्रह्मा के शरीर में इतने सिर होते हैं। इस तरह मैं असंख्य ब्रह्माण्डों का पालन करता हूँ।

'एक-पाद विभूति' ईहार नाहि परिमाण ।
'त्रि-पाद विभूति'र केवा करे परिमाण'' ॥ ८७॥

'एक-पाद विभूति' इहार नाहि परिमाण ।
'त्रि-पाद विभूति'र केबा करे परिमाण" ॥ ८७॥

एक-पाद विभूति—मेरे ऐश्वर्य के १/४ प्राकट्य; **इहार**—इसकी; **नाहि**—नहीं है; **परिमाण**—गणना; **त्रि-पाद विभूतिर**—मेरी शक्ति के ३/४, आध्यात्मिक जगत् का; **केबा**—कौन; **करे**—कर सकता है; **परिमाण**—माप।

अनुवाद

"'जब इस भौतिक जगत् में व्याप्त मेरी एक चौथाई शक्ति की लम्बाई तथा चौड़ाई को ही कोई नहीं माप सकता, तो भला आध्यात्मिक जगत् में प्रकट होने वाली मेरी तीन चौथाई शक्ति को कौन माप सकता है?'

तस्याः पारे पर-व्योम त्रिपाद्भूतं सनातनम् ।
अमृतं शाश्वतं नित्यमनन्तं परमं पदम् ॥ ८८॥

तस्याः पारे पर-व्योम त्रिपाद्भूतं सनातनम् ।
अमृतं शाश्वतं नित्यमनन्तं परमं पदम् ॥ ८८॥

तस्याः पारे—विरजा नदी के दूसरे किनारे; **पर-व्योम**—आध्यात्मिक आकाश; **त्रि-पात्-भूतम्**—परम भगवान् के ऐश्वर्य के ३/४ भाग रूप में स्थित; **सनातनम्**—नित्य;

अमृतम्—अक्षय; **शाश्वतम्**—काल के प्रभाव से रहित; **नित्यम्**—सदैव रहने वाला; **अनन्तम्**—असीमित; **परमम्**—सर्वश्रेष्ठ; **पदम्**—धाम।

अनुवाद

""""विरजा नदी के उस पार आध्यात्मिक प्रकृति है, जो अविनाशी, शाश्वत, अव्यय तथा असीम है। यह वह परम धाम है, जिसमें भगवान् का तीन चौथाई वैभव स्थित है। यह परव्योम अर्थात् आध्यात्मिक आकाश कहलाता है।'"

तात्पर्य

यह उद्धरण पद्म-पुराण का है, जिसे यहाँ कृष्ण ने सुनाया है।

তবে কৃষ্ণ ব্রহ্মারে দিলেন বিদায় ।
কৃষ্ণের বিভূতি-স্বরূপ জানান না যায় ॥৮৯॥

तबे कृष्ण ब्रह्मारे दिलेन विदाय ।
कृष्णेर विभूति-स्वरूप जानान ना ग्राय ॥ ८९ ॥

तबे—फिर; **कृष्ण**—भगवान् कृष्ण ने; **ब्रह्मारे**—इस ब्रह्माण्ड के ब्रह्माजी को; **दिलेन विदाय**—विदा किया; **कृष्णेर**—भगवान् कृष्ण के; **विभूति-स्वरूप**—दिव्य ऐश्वर्य की गणना; **जानान ना ग्राय**—जानना सम्भव नहीं है।

अनुवाद

"इस तरह कृष्ण ने इस ब्रह्माण्ड के चतुर्मुख ब्रह्मा को विदा किया। इस तरह हम समझ सकते हैं कि कृष्ण की शक्ति के परिमाण की कोई भी गणना नहीं कर सकता।

'ত্র্যধীশ্বর'-শব্দের অর্থ 'গূঢ়' আর হয় ।
'ত্রি'-শব্দে কৃষ্ণের তিন লোক কয় ॥৯০॥

'त्र्यधीश्वर'-शब्देर अर्थ 'गूढ़' आर हय ।
'त्रि'-शब्दे कृष्णेर तिन लोक कय ॥ ९० ॥

त्रि-अधीश्वर शब्देर—*त्रयधीश्वर* शब्द का; **अर्थ**—अर्थ; **गूढ़**—गुह्य; **आर**—दूसरा; **हय**—है; **त्रि-शब्दे**—'त्रि' शब्द द्वारा; **कृष्णेर**—कृष्ण के; **तिन लोक कय**—भगवान् कृष्ण के तीन स्थान या ऐश्वर्य।

अनुवाद

"'त्र्यधीश्वर' शब्द का अर्थ अत्यन्त गूढ़ है, जो यह बतलाता है कि कृष्ण के अधिकार में तीन विभिन्न लोक या प्रकृतियाँ हैं।

तात्पर्य

त्र्यधीश्वर शब्द का अर्थ है "तीन लोकों के स्वामी।" लोक तीन हैं और कृष्ण इन सबके परम स्वामी हैं। *भगवद्गीता* (५.२९) में कृष्ण द्वारा इसकी व्याख्या की गई है :

भोक्तारं यज्ञतपसां सर्वलोकमहेश्वरम्।
सुहृदं सर्वभूतानां ज्ञात्वा मां शान्तिमृच्छति॥

"पूर्ण रूप से मेरी चेतना में अवस्थित व्यक्ति मुझे सारे यज्ञों तथा तपस्याओं का चरम लक्ष्य, समस्त लोकों तथा देवताओं का परमेश्वर और सारे जीवों का उपकारी तथा शुभचिन्तक जानकर सारे भौतिक कष्टों की पीड़ा से शान्ति प्राप्त करता है।"

सर्वलोक शब्द का अर्थ है "तीनों जगत्" तथा *महेश्वर* शब्द का अर्थ है "परम स्वामी।" कृष्ण भौतिक तथा आध्यात्मिक दोनों जगत् के स्वामी हैं। आध्यात्मिक जगत् के दो विभाग हैं—गोलोक वृन्दावन तथा वैकुण्ठ। यह भौतिक जगत् अनन्त ब्रह्माण्डों का संयोग है।

गोलोकाख्य गोकुल, मथूरा, द्वारावती ।
एइ तिन लोके कृष्णेर सहजे नित्य-स्थिति ॥९१॥

गोलोकाख्य गोकुल, मथुरा, द्वारावती ।
एइ तिन लोके कृष्णेर सहजे नित्य-स्थिति ॥ ९१ ॥

गोलोक-आख्य—गोलोक नामक; **गोकुल**—गोकुल; **मथुरा**—मथुरा; **द्वारावती**—द्वारका; **एइ तिन लोके**—ये तीनों स्थान; **कृष्णेर**—भगवान् कृष्ण के; **सहजे**—स्वाभाविक; **नित्य-स्थिति**—नित्य निवासस्थान हैं।

अनुवाद

"लोक तीन हैं—गोकुल (गोलोक), मथुरा तथा द्वारका। कृष्ण इन्हीं तीनों स्थानों में शाश्वत निवास करते हैं।

तात्पर्य

श्रील भक्तिसिद्धान्त सरस्वती ठाकुर की टीका है कि गोलोक ग्रह के तीन विभाग हैं—गोकुल, मथुरा तथा द्वारका। कृष्ण अपने श्री चैतन्य महाप्रभु या गौरसुन्दर अवतार में जिन तीन क्षेत्रों में लीलाएँ करते हैं, वे हैं नवद्वीप, जगन्नाथ पुरी (तथा दक्षिण भारत) एवं व्रजमण्डल (वृन्दावन धाम का क्षेत्र)।

অন্তরঙ্গ-পূর্ণৈশ্বর্য-পূর্ণ তিন ধাম ।
তিনের অধীশ্বর—কৃষ্ণ স্বয়ং ভগবান্ ॥৯২॥

अन्तरङ्ग-पूर्णैश्वर्य-पूर्ण तिन धाम ।
तिनेर अधीश्वर—कृष्ण स्वयं भगवान् ॥ ९२ ॥

अन्तरङ्ग—आन्तरिक; **पूर्ण-ऐश्वर्य-पूर्ण**—सभी ऐश्वर्यों से पूर्ण; **तिन धाम**—तीनों धाम; **तिनेर अधीश्वर**—इन तीनों के स्वामी; **कृष्ण**—भगवान् कृष्ण; **स्वयम् भगवान्**—पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान्।

अनुवाद

"ये तीनों स्थान अन्तरंगा शक्तियों से पूर्ण हैं और पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् कृष्ण उनके सर्वेसर्वा हैं।

পূর্ব-উক্ত ব্রহ্মাণ্ডের যত দিক্পাল ।
অনন্ত বৈকুণ্ঠাবরণ, চির-লোক-পাল ॥৯৩॥
তাঁ-সবার মুকুট কৃষ্ণ-পাদ-পীঠ-আগে ।
দণ্ডবৎকালে তার মণি পীঠে লাগে ॥৯৪॥

पूर्व-उक्त ब्रह्माण्डेर यत दिक्पाल ।
अनन्त वैकुण्ठावरण, चिर-लोक-पाल ॥ ९३ ॥
ताँ-सबार मुकुट कृष्ण-पाद-पीठ-आगे ।
दण्डवत् काले तार मणि पीठे लागे ॥ ९४ ॥

पूर्व-उक्त—जैसा पहले वर्णन किया गया; **ब्रह्माण्डेर**—सभी ब्रह्माण्डों के; **यत**—सभी; **दिक्-पाल**—दिशाओं के निर्देशक; **अनन्त वैकुण्ठ-आवरण**—असंख्य वैकुण्ठों को घेरे हुए विस्तार; **चिर-लोक-पाल**—ब्रह्माण्ड के स्थाई नियन्त्रक; **ताँ-सबार**—उन सभी के; **मुकुट**—मुकुट; **कृष्ण-पाद-पीठ-आगे**—कृष्ण के चरणकमलों के सामने; **दण्डवत्-**

काले—प्रणाम करते समय; **तार**—उनके; **मणि**—रत्न; **पीठे**—चरणों पर; **लागे**—स्पर्श होते हैं।

अनुवाद

"जैसाकि पहले कहा जा चुका है, सारे ब्रह्माण्डों तथा वैकुण्ठ लोकों के समस्त अधिष्ठाता देवों के मुकुटों की मणियों ने भगवान् को नमस्कार करते समय उनके सिंहासन तथा चरणकमलों का स्पर्श किया है।

मणि-पीठे ठेकाठेकि, उठे झन्झनि ।
पीठेर स्तुति करे मुकुट—हेन अनुमानि ॥ ९५ ॥

मणि-पीठे ठेकाठेकि, उठे झन्झनि ।
पीठेर स्तुति करे मुकुट—हेन अनुमानि ॥ ९५ ॥

मणि-पीठे—मणियों तथा चरणकमलों अथवा सिंहासन के बीच; **ठेकाठेकि**—टकराव; **उठे**—उठती है; **झन्झनि**—झनझन की ध्वनि; **पीठेर**—चरणकमलों या सिंहासन में; **स्तुति**—प्रार्थनाएँ; **करे**—करते; **मुकुट**—सभी मुकुट; **हेन**—ऐसा; **अनुमानि**—प्रतीत हो रहा था।

अनुवाद

"जब सारे अधिष्ठाता देवों के मुकुटों की मणियाँ भगवान् के सिंहासन तथा उनके चरणकमलों के साथ टकराईं, तो झनझन की आवाज उत्पन्न हुई और ऐसा लगता था, मानो सारे मुकुट कृष्ण के चरणकमलों की स्तुति कर रहे हों।

निज-चिच्छक्ते कृष्ण नित्य विराजमान ।
चिच्छक्ति-सम्पत्तिर 'षड्-ऐश्वर्य' नाम ॥ ९६ ॥

निज-चिच्छक्ते कृष्ण नित्य विराजमान ।
चिच्छक्ति-सम्पत्तिर 'षड्-ऐश्वर्य्य' नाम ॥ ९६ ॥

निज—अपनी; **चित्-शक्ते**—आध्यात्मिक शक्ति में; **कृष्ण**—भगवान् कृष्ण; **नित्य**—नित्य रूप से; **विराजमान**—स्थित रहते हैं; **चित्-शक्ति**—आध्यात्मिक शक्ति के; **सम्पत्तिर**—ऐश्वर्य का; **षट्-ऐश्वर्य्य**—छः ऐश्वर्य; **नाम**—नाम है।

अनुवाद

"इस तरह कृष्ण सदैव अपनी आध्यात्मिक शक्ति में स्थित रहते हैं और इस शक्ति का वैभव षडैश्वर्य कहलाता है।

সেই স্বারাজ্য-লক্ষ্মী করে নিত্য পূর্ণ কাম ।
অতএব বেদে কহে 'স্বয়ং ভগবান্' ॥৯৭॥

सेइ स्वाराज्य-लक्ष्मी करे नित्य पूर्ण काम ।
अतएव वेदे कहे 'स्वयं भगवान्' ॥ ९७॥

सेइ स्वाराज्य-लक्ष्मी—वह निजी ऐश्वर्य; **करे**—करते हैं; **नित्य**—सदैव; **पूर्ण**—पूर्ति; **काम**—सभी इच्छाओं की; **अतएव**—इसलिए; **वेदे**—वेदों में; **कहे**—ऐसा कहा गया है; **स्वयम् भगवान्**—कृष्ण पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् हैं।

अनुवाद

"चूँकि उनके पास आध्यात्मिक शक्तियाँ हैं, जो उनकी सारी इच्छाओं की पूर्ति करती हैं, अतएव कृष्ण पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् माने जाते हैं। यह वेदों का कथन है।

কৃষ্ণের ঐশ্বর্য—অপার অমৃতের সিন্ধু ।
অবগাহিতে নারি, তার ছুইলঁ এক বিন্দু ॥৯৮॥

কৃষ্ণের ঐশ্বর্য—অপার অমৃতের সিন্ধু ।
অবগাহিতে নারি, তার ছুইলঁ এক বিন্দু ॥ ৯৮॥

কৃষ্ণের ঐশ্বর্য—কৃষ্ণ के ऐश्वर्य; **अपार**—असीमित; **अमृतेर सिन्धु**—अमृत के समुद्र; **अवगाहिते**—स्नान करने में; **नारि**—मैं असमर्थ हूँ; **तार**—उसकी; **छुइलँ**—मैंने स्पर्श किया है; **एक बिन्दु**—मात्र एक बूँद।

अनुवाद

"कृष्ण की असीम शक्तियाँ अमृत के सागर के समान हैं। चूँकि उस सागर में कोई स्नान नहीं कर सकता, इसलिए मैंने उसकी एक बूँद का स्पर्श मात्र किया है।"

ঐশ্বর্য কহিতে প্রভুর কৃষ্ণ-স্ফূর্তি হৈল ।
মাধুর্যে মজিল মন, এক শ্লোক পড়িল ॥৯৯॥

ঐশ্বর্য কহিতে প্রভুর কৃষ্ণ-স্ফূর্তি হৈল ।
মাধুর্যে মজিল মন, এক শ্লোক পড়িল ॥ ৯৯॥

ऐश्वर्य्य कहिते—ऐश्वर्य का वर्णन करते हुए; **प्रभुर**—श्री चैतन्य महाप्रभु का; **कृष्ण-स्फूर्ति**—कृष्ण-प्रेम की जागृति; **हैल**—हो गई; **माधुर्य्ये**—माधुर्य प्रेम की मधुरता में; **मजिल मन**—मन निमग्न हो गया; **एक**—एक; **श्लोक**—श्लोक; **पड़िल**—पढ़ा।

अनुवाद

जब श्री चैतन्य महाप्रभु ने इस तरह से कृष्ण के ऐश्वर्य तथा उनकी आध्यात्मिक शक्तियों का वर्णन किया, तब उनके भीतर कृष्ण-प्रेम जाग उठा। उनका मन माधुर्य-प्रेम की माधुरी में निमग्न हो गया और उन्होंने *श्रीमद्भागवत* का निम्नलिखित श्लोक सुनाया।

यन्मर्त्य-लीलौपयिकं स्व-योग-
मायाबलं दर्शयता गृहीतम् ।
विस्मापनं स्वस्य च सौभगर्द्धेः
परं पदं भूषण-भूषणाङ्गम् ॥ १०० ॥

यन्मर्त्य-लीलौपयिकं स्व-योग-
मायाबलं दर्शयता गृहीतम् ।
विस्मापनं स्वस्य च सौभगर्द्धेः
परं पदं भूषण-भूषणाङ्गम् ॥ १०० ॥

यत्—जो; **मर्त्य-लीला**—भौतिक जगत् में लीलाएँ; **औपयिकम्**—के लिए उपयुक्त; **स्व**—उनकी अपनी; **योग-माया**—आध्यात्मिक शक्ति का; **बलम्**—बल; **दर्शयता**—दिखाकर; **गृहीतम्**—स्वीकृत; **विस्मापनम्**—आश्चर्य उत्पन्न करनेवाली; **स्वस्य**—स्वयं उनके लिए; **च**—तथा; **सौभग-ऋधेः**—सौभाग्य के खजाने के; **परम्**—सर्वश्रेष्ठ; **पदम्**—धाम; **भूषण**—आभूषणों के; **भूषण-अङ्गम्**—जिनके अंग आभूषण हैं।

अनुवाद

'"भगवान् कृष्ण ने अपनी आध्यात्मिक शक्ति का प्रदर्शन करने के लिए इस भौतिक जगत् में अपनी लीलाओं के उपयुक्त एक रूप प्रकट किया। यह रूप उनके लिए भी अद्भुत था और सौभाग्य-सम्पदा का परम धाम था। उसके अंग इतने सुन्दर थे कि वे उनके शरीर में धारण किये हुए आभूषणों के सौन्दर्य को बढ़ा रहे थे।'

तात्पर्य

यह श्लोक *श्रीमद्भागवत* (३.२.१२) का है और उद्धव तथा विदुर की

वार्ता के प्रसंग में आया है। उद्धव श्रीकृष्ण द्वारा उस रूप में की गई लीलाओं का वर्णन कर रहे हैं, जिन्हें योगमाया ने प्रकट किया था।

कृष्णेर यतेक खेला, सर्वोत्तम नर-लीला,
नर-वपु ताहार स्वरूप ।
गोप-वेश, वेणु-कर, नव-किशोर, नट-वर,
नर-लीलार हय अनुरूप ॥ १०१॥

कृष्णेर य्रतेक खेला, सर्वोत्तम नर-लीला,
नर-वपु ताहार स्वरूप ।
गोप-वेश, वेणु-कर, नव-किशोर, नट-वर,
नर-लीलार हय अनुरूप ॥ १०१॥

कृष्णेर—भगवान् कृष्ण की; **य्रतेक**—सभी; **खेला**—लीलाएँ; **सर्व-उत्तम**—सबसे अधिक आकर्षक; **नर-लीला**—मनुष्य रूप में की गई लीलाएँ; **नर-वपु**—एक मनुष्य जैसा शरीर; **ताहार**—जिनका; **स्वरूप**—रूप; **गोप-वेश**—एक ग्वाल बालक का वेश; **वेणु-कर**—हाथों में एक बाँसुरी के साथ; **नव-किशोर**—नवयुवक; **नट-वर**—एक दक्ष नर्तक; **नर-लीलार**—एक मनुष्य के रूप में लीलाएँ करने के लिए; **हय**—है; **अनुरूप**—उपयुक्त।

अनुवाद

"भगवान् कृष्ण की अनेक लीलाएँ हैं, जिनमें मनुष्य रूप में उनकी लीलाएँ सर्वोत्तम हैं। उसका मनुष्य रूप सर्वोत्कृष्ट दिव्य रूप है। इस रूप में वे ग्वालबाल हैं। वे अपने हाथ में वंशी लिये रहते हैं और उनकी कैशोरावस्था नित्य नूतन बनी रहती है। वे एक दक्ष नर्तक भी हैं। यह सब मनुष्य रूप में उनकी लीलाओं के सर्वथा अनुरूप है।

कृष्णेर मधुर रूप, शुन, सनातन
यें रूपेर एक कण, डुबाय सब त्रिभुवन, ।
सर्व प्राणी करे आकर्षण ॥ १०२॥

कृष्णेर मधुर रूप, शुन, सनातन
य्रे रूपेर एक कण, डुबाय सब त्रिभुवन, ।
सर्व प्राणी करे आकर्षण ॥ १०२॥

कृष्णेर—भगवान् कृष्ण का; **मधुर**—मधुर; **रूप**—रूप; **शुन**—कृपया सुनो; **सनातन**—हे मेरे प्रिय सनातन; **ग्रे रूपेर**—जिस रूप का; **एक कण**—एक कण मात्र भी; **डुबाय**—डुबा देता है; **सब**—समस्त; **त्रि-भुवन**—तीन लोक; **सर्व प्राणी**—सभी जीव; **करे**—करता है; **आकर्षण**—आकर्षित।

अनुवाद

"हे प्रिय सनातन, कृष्ण का मधुर आकर्षक दिव्य रूप इतना सुन्दर है। जरा इसे समझने का प्रयास करो। कृष्ण के सौन्दर्य के ज्ञान का एक अंश भी तीनों जगतों को प्रेम के समुद्र में डुबो सकता है। वे तीनों जगतों के सारे जीवों को आकर्षित करने वाले हैं।

যোগমায়া চিচ্ছক্তি, বিশুদ্ধ-সত্ত্ব-পরিণতি,
তার শক্তি লোকে দেখাইতে ।
এই রূপ-রতন, ভক্ত-গণের গূঢ়-ধন,
প্রকট কৈলা নিত্য-লীলা হৈতে ॥ ১০৩॥

য়োগমায়া চিচ্ছক্তি, বিশুদ্ধ-সত্ত্ব-পরিণতি,
তার শক্তি লোকে দেখাইতে ।
এइ রূপ-রতন, ভক্ত-গণের গূঢ়-ধন,
প্রকট কৈলা নিত্য-লীলা হৈতে ॥ ১০३॥

য়োগ-মায়া—अन्तरंगा शक्ति; **चित्-शक्ति**—आध्यात्मिक शक्ति; **विशुद्ध-सत्त्व**—विशुद्ध सत्त्वगुण का; **परिणति**—एक परिवर्तित रूप; **तार शक्ति**—उस शक्ति का प्रभाव; **लोके देखाइते**—भौतिक जगत् में प्रदर्शित करने के लिए; **एइ रूप-रतन**—यह रत्न के समान सुन्दर, दिव्य रूप; **भक्त-गणेर गूढ़-धन**—भक्तों का गुप्त खजाना; **प्रकट**—प्रदर्शित; **कैला**—किया; **नित्य-लीला हैते**—भगवान् की नित्य लीलाओं से।

अनुवाद

"भगवान् कृष्ण का दिव्य रूप जगत् को उनकी अन्तरंगा शक्ति द्वारा प्रदर्शित किया जाता है। यह शक्ति शुद्ध सत्त्व का रूपान्तर है। रत्न जैसा यह रूप भक्तों का अत्यन्त गुप्त धन है। यह रूप कृष्ण की सनातन लीलाओं से प्रकट होता है।

রূপ দেখি' আপনার, কৃষ্ণের হৈল চমৎকার,
আস্বাদিতে মনে উঠে কাম ।
'স্ব-সৌভাগ্য' যাঁর নাম, সৌন্দর্যাদি-গুণ-গ্রাম,
এই-রূপ নিত্য তার ধাম ॥১০৪॥

রূপ দেখি' আপনার, কৃষ্ণের হৈল চমৎকার,
আস্বাদিতে মনে উঠে কাম ।
'স্ব-সৌভাগ্য' য়াঁর নাম, সৌন্দর্য্যাদি-গুণ-গ্রাম,
এइ-রূপ নিত্য তার ধাম ॥১০৪॥

রূপ দেখি'—রূप को देखकर; **आपनार**—स्वयं अपना; **कृष्णेर**—भगवान् कृष्ण को; **हैल**—हो गया; **चमत्कार**—आश्चर्य; **आस्वादिते**—आस्वादन करने की; **मने**—मन में; **उठे**—जागती है; **काम**—लालसा; **स्व-सौभाग्य**—स्वयं अपना सौभाग्य; **य़ाँर**—जिनका; **नाम**—नाम; **सौन्दर्य्य-आदि-गुण-ग्राम**—सुन्दरता आदि गुणों का भण्डार; **एइ रूप**—यह रूप; **नित्य**—शाश्वत; **तार**—उनका; **धाम**—निवासस्थान।

अनुवाद

"कृष्ण का अपना अद्भुत स्वरूप इतना महान् है कि वह कृष्ण को भी अपनी खुद की संगति का आस्वादन करने के लिए आकृष्ट करता है। इस तरह कृष्ण उसका आस्वादन करने के लिए अत्यन्त उत्सुक हो उठते हैं। सम्पूर्ण सौन्दर्य, ज्ञान, सम्पत्ति, बल, यश तथा त्याग—ये कृष्ण के छह ऐश्वर्य हैं। वे अपने इन ऐश्वर्यों में सदा स्थित रहते हैं।

तात्पर्य

कृष्ण की अनेक लीलाएँ हैं, जिनमें गोलोक वृन्दावन की लीलाएँ (*गोकुल-लीला*) सर्वोच्च हैं। वे वैकुण्ठ लोकों में भी वासुदेव, संकर्षण, प्रद्युम्न तथा अनिरुद्ध के रूप में लीलाएँ करते हैं। आध्यात्मिक आकाश की लीलाओं में वे कारण सागर में कारणार्णवशायी अथवा पुरुष-अवतार के रूप में शयन करते हैं। मत्स्य, कूर्म आदि उनके अवतार उनके नैमित्तिक अवतार कहलाते हैं। वे ब्रह्माजी, शिवजी तथा भगवान् विष्णु के रूप में प्रकृति के गुणों में अवतरित होते हैं। वे पृथु तथा व्यास जैसे शक्तिप्रदत्त जीवों (शक्त्यावेश अवतार) के रूप में भी अवतरित होते हैं। परमात्मा तो उनके अन्तर्यामी (साकार) अवतार हैं और उनका सर्वव्यापक पहलू निर्विशेष ब्रह्म है।

जब हम निष्पक्ष होकर भगवान् की अनन्त लीलाओं पर विचार करते हैं, तो पाते हैं कि इस ग्रह की मनुष्य रूप में उनकी लीलाओं—जिनमें वे अपने हाथ में वंशी लिए गोपवेश में क्रीड़ा करते हैं और नाटक के नर्तक की तरह किशोर तथा नवीन लगते हैं—उन पर भौतिक नियम लागू नहीं होते और साथ ही वे लीलाएँ भौतिक जगत् के उन्माद से परे हैं। कृष्ण का अद्भुत सौन्दर्य गोकुल (गोलोक वृन्दावन) नामक सर्वश्रेष्ठ लोक में प्रकट होता है। परव्योम में उनका सौन्दर्य उससे घटकर रहता है और देवी-धाम में प्रकट होने वाला उनका सौन्दर्य उससे भी घटकर होता है। कृष्ण की माधुरी की एक बूँद भी इन तीनों लोकों—गोलोक वृन्दावन, हरि-धाम (वैकुण्ठ लोक) तथा देवी-धाम (भौतिक जगत्) को आप्लावित कर सकती है। कृष्ण का सौन्दर्य सर्वत्र सबको दिव्य आनन्द-भाव में निमग्न करने वाला है। वास्तव में परव्योम तथा वैकुण्ठ लोकों में योगमाया के कार्यकलाप अनुपस्थित रहते हैं। वह केवल परम धाम गोलोक वृन्दावन में कार्य करती है और जब कृष्ण अपने असंख्य भक्तों को प्रसन्न करने के लिए इस भौतिक जगत् में अवतरित होते हैं, तब वह कृष्ण के कार्यों को प्रकट करने के लिए कार्य करती है। इस तरह गोलोक वृन्दावन धाम तथा वहाँ की लीलाओं की प्रतिकृति अर्थात् उसका एक नमूना इस लोक के एक विशेष भूभाग—भौम वृन्दावन या वृन्दावन-धाम में प्रकट होता है।

ভূষণের ভূষণ অঙ্গ, তাহেঁ ললিত ত্রি-ভঙ্গ,
তাহার উপর ভ্রূধনু-নর্তন ।
তেরছে নেত্রান্ত বাণ, তার দৃঢ় সন্ধান,
বিন্ধে রাধা-গোপী-গণ-মন ॥ ১০৫ ॥

भूषणेर भूषण अङ्ग, ताहें ललित त्रि-भङ्ग,
ताहार उपर भ्रूधनु-नर्तन ।
तेरछे नेत्रान्त बाण, तार दृढ़ सन्धान,
विन्धे राधा-गोपी-गण-मन ॥ १०५ ॥

भूषणेर—आभूषणों के; **भूषण**—आभूषण; **अङ्ग**—शरीर के अंग; **ताहें**—वह लक्षण; **ललित**—आकर्षक; **त्रि-भङ्ग**—तीन स्थानों पर तिरछे; **ताहार उपर**—उस पर; **भ्रू-धनु-**

नर्तन—भौहों का नृत्य; **तेरछे**—तिरछे; **नेत्र-अन्त**—आँखों के किनारों के; **बाण**—तीर; **तार**—उस तीर का; **दृढ़**—कठोर; **सन्धान**—निशाना; **विन्धे**—बींध देता है; **राधा**—श्रीमती राधारानी के; **गोपी-गण**—तथा गोपियों के; **मन**—मनों को।

अनुवाद

"उस शरीर को आभूषण सहलाते हैं, किन्तु कृष्ण का दिव्य शरीर इतना सुन्दर है कि यह उनके द्वारा पहने गये आभूषणों को सुन्दर बना देता है। इसलिए कृष्ण का शरीर आभूषणों का आभूषण कहलाता है। उनके खड़े होने का त्रिभंगी ढंग उस स्वरूप को भी चार चाँद लगा देता है। इन समस्त सुन्दर लक्षणों के भी ऊपर कृष्ण की आँखें नृत्य करती है और कटाक्ष करती हैं, जो श्रीमती राधारानी तथा गोपियों के मनों को भेदने वाले बाणों का काम करती हैं। जब बाण लक्ष्यभेद कर लेता है, तो उनके मन विचलित हो उठते हैं।

ब्रह्माण्डोपरि परव्योम, ताहाँ ये स्वरूप-गण,
ताँ-सवार बले हरे मन ।
पति-व्रता-शिरोमणि, याँरे कहे वेद-वाणी,
आकर्षये सेई लक्ष्मी-गण ॥ १०६॥

ब्रह्माण्डोपरि परव्योम, ताहाँ ग्रे स्वरूप-गण,
ताँ-सबार बले हरे मन ।
पति-व्रता-शिरोमणि, ग्याँरे कहे वेद-वाणी,
आकर्षये सेइ लक्ष्मी-गण ॥ १०६॥

ब्रह्माण्ड-उपरि—सभी ब्रह्माण्डों के ऊपर; **पर-व्योम**—आध्यात्मिक आकाश; **ताहाँ**—वहाँ; **ग्रे**—वे सभी; **स्वरूप-गण**—दिव्य स्वरूप के विस्तार; **ताँ-सबार**—उन सभी के; **बले**—बलपूर्वक; **हरे मन**—मनों को हर लेता है; **पति-व्रता**—पतिव्रता स्त्रियों में; **शिरोमणि**—सर्वश्रेष्ठ; **ग्याँरे**—जिसे; **कहे**—कहते हैं; **वेद-वाणी**—वेदों के छन्द; **आकर्षये**—यह आकर्षित करता है; **सेइ**—उन; **लक्ष्मी-गण**—सभी लक्ष्मियों को।

अनुवाद

"कृष्ण के शरीर का सौन्दर्य इतना आकर्षक है कि वह न केवल इस भौतिक जगत् के देवताओं तथा जीवों को आकृष्ट करता है, अपितु

नारायण समेत परव्योम के उन समस्त पुरुषों को भी आकृष्ट करने वाला है, जो कृष्ण के विस्तार हैं। इस तरह समस्त नारायणों के मन कृष्ण के शारीरिक सौन्दर्य द्वारा आकृष्ट हो जाते हैं। इसके अतिरिक्त, इन नारायणों की पत्नियाँ, लक्ष्मियाँ, जिन्हें वेदों में सवाधिक पतिव्रता कहा गया है, कृष्ण के अद्‌भुत सौन्दर्य द्वारा आकृष्ट हो जाती हैं।

चड़ि' गोपी-मनोरथे, मन्मथेर मन मथे,
नाम धरे 'मदन-मोहन' ।
जिनि' पञ्चशर-दर्प, स्वयं नव-कन्दर्प,
रास करे लञा गोपी-गण ॥ १०७॥

चड़ि' गोपी-मनोरथे, मन्मथेर मन मथे,
नाम धरे 'मदन-मोहन' ।
जिनि' पञ्चशर-दर्प, स्वयं नव-कन्दर्प,
रास करे लञा गोपी-गण ॥ १०७॥

चड़ि'—सवार होकर; **गोपी-मनः-रथे**—गोपियों के मन रूपी रथों पर; **मन्मथेर**—कामदेव के; **मन**—मन का; **मथे**—मंथन करते हैं; **नाम**—नाम; **धरे**—स्वीकार करते हैं; **मदन-मोहन**—मदनमोहन, कामदेव को मोहित करने वाले; **जिनि'**—जीतकर; **पञ्च-शर**—इन्द्रियों के पाँच तीरों के स्वामी, कामदेव के; **दर्प**—घमंड को; **स्वयम्**—खुद; **नव**—नये; **कन्दर्प**—कामदेव; **रास**—रासनृत्य; **करे**—करते हैं; **लञा**—साथ; **गोपी-गण**—गोपियाँ।

अनुवाद

"गोपियों पर कृपा करते हुए उनके मनरूपी रथों पर चढ़कर तथा उनसे प्रेममयी सेवा प्राप्त करने के लिए कृष्ण कामदेव की भाँति उनके मनों को आकृष्ट करते हैं। इसलिए वे मदनमोहन अर्थात् कामदेव को आकृष्ट करने वाले भी कहलाते हैं। कामदेव के पाँच बाण हैं, जो रूप, स्वाद, गन्ध, शब्द तथा स्पर्श के द्योतक होते हैं। कृष्ण इन पाँचों बाणों के स्वामी हैं और वे कामदेव जैसे सौन्दर्य द्वारा गोपियों के मनों को जीतते हैं, यद्यपि उन्हें अपने अपूर्व सौन्दर्य का बड़ा गुमान है। कृष्ण नवीन कामदेव बनकर उनके मनों को आकृष्ट करते हैं और रासलीला करते हैं।

निज-सम सखा-सङ्गे, गो-गण-चारण रङ्गे,
वृन्दावने स्वच्छन्द विहार ।
याँर वेणु-ध्वनि शुनि', स्थावर-जङ्गम प्राणी,
पुलक, कम्प, अश्रु वहे धार ॥ १०८॥

निज-सम सखा-सङ्गे, गो-गण-चारण रङ्गे,
वृन्दावने स्वच्छन्द विहार ।
याँर वेणु-ध्वनि शुनि', स्थावर-जङ्गम प्राणी,
पुलक, कम्प, अश्रु वहे धार ॥ १०८॥

निज-सम—अपने समान; **सखा-सङ्गे**—मित्रों के साथ; **गो-गण**—असंख्य गायें; **चारण**—चराने की; **रङ्गे**—ऐसी लीलाएँ; **वृन्दावने**—वृन्दावन में; **स्वच्छन्द**—स्वत:स्फूर्त; **विहार**—आनन्दमय विलास; **याँर**—जिनकी; **वेणु-ध्वनि शुनि'**—वंशी की ध्वनि सुनकर; **स्थावर-जङ्गम प्राणी**—चर तथा अचर सभी प्राणी; **पुलक**—आनन्दित होना; **कम्प**—काँपते हुए; **अश्रु**—आँसुओं की; **वहे**—बहती हैं; **धार**—धाराएँ।

अनुवाद

"जब भगवान् कृष्ण अपने ही समान अपने मित्रों के साथ वृन्दावन में विचरण करते हैं, तब असंख्य गौवें चरती रहती हैं। यह भगवान् का एक अन्य अनन्दमय विहार है। जब वे अपनी बाँसुरी बजाते हैं, तो सारे जीव—जिसमें वृक्ष, पौधे, पशु तथा मनुष्य सम्मिलित हैं,—काँपने लगते हैं और हर्ष से पूरित हो उठते हैं। उनकी आँखों से निरन्तर अश्रुधारा बहने लगती है।

मुक्ता-हार—बक-पाँति, इन्द्र-धनु-पिञ्छ तति,
पीताम्बर—विजुरी-सञ्चार ।
कृष्ण नव-जलधर, जगत्-शस्य-उपर,
वरिषये लीलामृत-धार ॥ १०९॥

मुक्ता-हार—बक-पाँति, इन्द्र-धनु-पिञ्छ तति,
पीताम्बर—विजुरी-सञ्चार ।
कृष्ण नव-जलधर, जगत्-शस्य-उपर,
वरिषये लीलामृत-धार ॥ १०९॥

मुक्ता-हार—हीरों का एक हार; **बक-पाँति**—श्वेत बगुलों की एक पंक्ति के समान; **इन्द्र-धनु**—एक इन्द्रधनुष के समान; **पिञ्छ**—मोर की पंख; **तति**—वहाँ; **पीत-अम्बर**—पीले वस्त्र; **विजुरी-सञ्चार**—आकाश में चमकती बिजली के समान; **कृष्ण**—भगवान् कृष्ण; **नव**—नये; **जल-धर**—जलयुक्त बादल; **जगत्**—ब्रह्माण्ड; **शस्य**—गेहूँ की फसल के समान; **उपर**—ऊपर; **वरिषये**—वर्षा करते हैं; **लीला-अमृत**—भगवान् कृष्ण की लीलाएँ; **धार**—धारा।

अनुवाद

"कृष्ण द्वारा गले में पहनी मोती की माला श्वेत बगुलों की पंक्ति जैसी लगती है। उनके बालों में लगा मोरपंख इन्द्रधनुष जैसा और उनके पीले वस्त्र आकाश में बिजली जैसे लगते हैं। कृष्ण नये उठे हुए बादल जैसे लगते हैं और गोपियाँ खेत में खिले नये गेहूँ जैसी लगती हैं। इन नई खिली फसलों पर पर अमृतमयी लीलाओं की निरन्तर वर्षा होती है और ऐसा लगता है कि गोपियाँ कृष्ण से उसी तरह जीवन रश्मियाँ प्राप्त कर रही हैं, जिस तरह वर्षा से विविध प्रकार की फसलें जीवन प्राप्त करती हैं।

माधुर्य भगवत्ता-सार, व्रजे कैल परचार,
ताहा शुक——व्यासेर नन्दन ।
स्थाने स्थाने भागवते, वर्णियाछे जानाइते,
ताहा शुनि' माते भक्त-गण ॥ ११०॥

माधुर्य्य भगवत्ता-सार, व्रजे कैल परचार,
ताहा शुक——व्यासेर नन्दन ।
स्थाने स्थाने भागवते, वर्णियाछे जानाइते,
ताहा शुनि' माते भक्त-गण ॥ ११०॥

माधुर्य्य—मधुरता; **भगवत्ता-सार**—पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् के ऐश्वर्यों का सार; **व्रजे**—वृन्दावन में; **कैल**—किया; **परचार**—प्रचार; **ताहा**—वह; **शुक**—शुकदेव गोस्वामी; **व्यासेर नन्दन**—व्यासदेव के पुत्र; **स्थाने स्थाने**—विभिन्न स्थानों पर; **भागवते**—*श्रीमद्भागवत* में; **वर्णियाछे**—वर्णित किया है; **जानाइते**—बताने के लिए; **ताहा शुनि'**—उन वचनों को सुनकर; **माते**—पागल हो जाते हैं; **भक्त-गण**—सभी भक्त।

अनुवाद

"पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् कृष्ण अपने आकर्षक सौन्दर्य समेत छहों ऐश्वर्यों से पूर्ण हैं, जिसके कारण वे गोपियों के साथ माधुर्य-प्रेम में रत

होते हैं। ऐसी माधुरी उनके गुणों का सार है। व्यासदेव के पुत्र शुकदेव गोस्वामी ने श्रीमद्भागवत में स्थान-स्थान पर कृष्ण की इन लीलाओं का वर्णन किया है, जिन्हें सुनकर भक्तगण भगवत्प्रेम में उन्मत्त हो उठते हैं।"

कहिते कृष्णेर रसे, श्लोक पड़े प्रेमावेशे,
प्रेमे सनातन-हात धरि' ।
गोपी-भाग्य, कृष्ण गुण, ये करिल वर्णन,
भावावेशे मथुरा-नागरी ॥ १११॥

कहिते कृष्णेर रसे, श्लोक पड़े प्रेमावेशे,
प्रेमे सनातन-हात धरि' ।
गोपी-भाग्य, कृष्ण गुण, ये करिल वर्णन,
भावावेशे मथुरा-नागरी ॥ १११॥

कहिते—वर्णन करने के लिए; **कृष्णेर**—भगवान् कृष्ण के; **रसे**—विभिन्न प्रकार के रस; **श्लोक**—एक श्लोक; **पड़े**—पढ़ते हैं; **प्रेम-आवेशे**—प्रेमभाव से विभोर होकर; **प्रेमे**—प्रेम से; **सनातन-हात धरि'**—सनातन गोस्वामी के हाथ थामकर; **गोपी-भाग्य**—गोपियों के सौभाग्य; **कृष्ण गुण**—भगवान् कृष्ण के दिव्य गुण; **ये**—जो; **करिल वर्णन**—वर्णन किया; **भाव-आवेशे**—प्रेमभाव में; **मथुरा-नागरी**—मथुरा की स्त्रियों ने।

अनुवाद

जिस तरह मथुरा की स्त्रियों ने वृन्दावन की गोपियों के भाग्य तथा कृष्ण के दिव्य गुणों का भावमय वर्णन किया है, उसी तरह श्री चैतन्य महाप्रभु ने कृष्ण के विभिन्न रसों का वर्णन किया और वे प्रेमभाव से अभिभूत हो गये। उन्होंने सनातन गोस्वामी का हाथ थामकर निम्नलिखित श्लोक पढ़ा।

गोप्यस्तपः किमचरन् यदमुष्य रूपं
लावण्य-सारमसमोर्ध्वमनन्य-सिद्धम् ।
दृग्भिः पिबन्त्यनुसवाभिनवं दुरापम्
एकान्त-धाम यशसः श्रिय ऐश्वरस्य ॥ ११२॥

गोप्यस्तपः किमचरन् यदमुष्य रूपं
लावण्य-सारमसमोर्ध्वमनन्य-सिद्धम् ।
दृग्भिः पिबन्त्यनुसवाभिनवं दुरापम्
एकान्त-धाम यशसः श्रिय ऐश्वरस्य ॥ ११२॥

गोप्यः—गोपियों ने; **तपः**—तपस्याएँ; **किम्**—कौन सी; **अचरन्**—की; **यत्**—जिनके द्वारा; **अमुष्य**—ऐसे (भगवान् कृष्ण); **रूपम्**—स्वरूप; **लावण्य-सारम्**—सुन्दरता का सार; **असम-ऊर्ध्वम्**—जिसके समान या उससे बढ़कर कुछ नहीं है; **अनन्य-सिद्धम्**—जो किसी अन्य आभूषण द्वारा शोभित नहीं है (स्वयं सिद्ध); **दृग्भिः**—आँखों द्वारा; **पिबन्ति**—वे पान करती हैं; **अनुसव-अभिनवम्**—निरन्तर नवीन; **दुरापम्**—कठिनाई से मिलने वाले; **एकान्त-धाम**—एकमात्र धाम; **यशसः**—यश के; **श्रियः**—सुन्दरता के; **ऐश्वरस्य**—ऐश्वर्य के।

अनुवाद

"'गोपियों ने कौन-सी तपस्या की होगी? वे कृष्ण के रूप के उस अमृत को अपनी आँखों से सदा पीती हैं, जो लावण्य का सार है और जिसकी न तो समानता हो सकती है, न जिसको लाँघा जा सकता है। वह लावण्य सौन्दर्य, यश तथा ऐश्वर्य का एकमात्र धाम है। वह स्वयं-सिद्ध, चिर-नवीन तथा अद्वितीय है।'

तात्पर्य

यह श्लोक *श्रीमद्भागवत* (१०.४४.१४) का है, जिसे मथुरा की स्त्रियों ने कृष्ण को मल्लभूमि में देखकर कहा था।

তারুণ্যামৃত—পারাবার, তরঙ্গ—লাবণ্য-সার,
তাতে সে আবর্ত ভাবোদ্গম ।
বংশী-ধ্বনি—চক্রবাত, নারীর মন—তৃণ-পাত,
তাহা ডুবায়, না হয় উদ্গম ॥ ১১৩॥

তারুণ্যামৃত—পারাবার, তরঙ্গ—লাবণ্য-সার,
তাতে সে আবর্ত ভাবোদ্গম ।
বংশী-ধ্বনি—চক্রবাত, নারীর মন—তৃণ-পাত,
তাহা ডুবায়, না হয় উদ্গম ॥ ১১৩॥

তারুণ্য-অমৃত—नित्य यौवन; **पारावार**—एक विशाल समुद्र के समान; **तरङ्ग**—लहरें; **लावण्य-सार**—शरीर की सुन्दरता का सार; **ताते**—उस समुद्र में; **से**—वह; **आवर्त**—एक

भंवर के समान; **भाव-उद्गम**—विभिन्न प्रेम भावनाओं का जागरण; **वंशी-ध्वनि**—बाँसुरी की ध्वनि; **चक्रवात**—एक चक्रवात के समान; **नारीर**—स्त्रियों के; **मन**—मनों को; **तृण-पात**—घास के तिनके; **ताहा**—उन्हें; **डुबाय**—डुबा देती है; **ना हय उद्गम**—फिर कभी बाहर नहीं आ पाते।

अनुवाद

"श्रीकृष्ण के शरीर का सौन्दर्य चिर यौवन के सागर की एक तरंग की भाँति है। उस महासागर में प्रेमभाव का उदय भँवर के समान है। कृष्ण की वंशी की ध्वनि चक्रवात की तरह है और गोपियों के चंचल मन सूखे पत्तों और तिनकों की तरह हैं। जब वे चक्रवात में गिर जाते हैं, तो फिर ऊपर कभी नहीं उठते, अपितु कृष्ण के चरणकमलों में ही निरन्तर पड़े रहते हैं।

সখি হে, কোন্তপ কৈল গোপী-গণ
কৃষ্ণ-রূপ-সুমাধুরী, পিবি' পিবি' নেত্র ভরি', ।
শ্লাঘ্য করে জন্ম-তনু-মন ॥ ১১৪॥

সখি হে, কোন্ তপ কৈল গোপী-গণ
কৃষ্ণ-রূপ-সুমাধুরী, পিবি' পিবি' নেত্র ভরি', ।
শ্লাঘ্য করে জন্ম-তনু-মন ॥ ১১৪॥

সখি হে—मेरी प्रिय सखी; **কোন্**—क्या; **তপ**—तपस्याएँ; **কৈল**—की हैं; **গোপী-গণ**—सभी गोपियों ने; **কৃষ্ণ-রূপ**—भगवान् कृष्ण की सुन्दरता का; **সু-মাধুরী**—समस्त मधुरता का सार; **পিবি' পিবি'**—पी-पीकर; **নেত্র ভরি'**—नेत्र भरकर; **শ্লাঘ্য করে**—वे गुणगान करते हैं; **জন্ম-তনু-মন**—उनके जन्म, शरीर तथा मनों का।

अनुवाद

"हे प्रिय सखी, गोपियों ने कौन-सी कठिन तपस्या की है कि वे उनकी दिव्य सुन्दरता तथा माधुरी को अपनी आँखों से जी भरकर पी रही हैं? इस तरह वे अपने जन्म, शरीर तथा मन को सफल बनाती हैं।

যে মাধুরীর ঊর্ধ্ব আন, নাহি যার সমান,
পরব্যোমে স্বরূপের গণে ।

येँहो सब-अवतारी, परव्योम-अधिकारी,
एइ माधुर्य नाहि नारायणे ॥ ११५ ॥

ग्रे माधुरीर ऊर्ध्व आन, नाहि ग्रार समान,
परव्योमे स्वरूपेर गणे ।
ग्रेंहो सब-अवतारी, परव्योम-अधिकारी,
ए माधुर्य नाहि नारायणे ॥ ११५ ॥

ग्रे माधुरीर—जिस मधुरता से; **ऊर्ध्व**—उच्चतर; **आन**—दूसरा; **नाहि**—नहीं है; **ग्रार समान**—उसके समान; **पर-व्योमे**—आध्यात्मिक आकाश में; **स्वरूपेर गणे**—कृष्ण के स्वरूप के विस्तारों में; **ग्रेंहो**—जो; **सब-अवतारि**—सभी अवतारों के मूल स्रोत हैं; **पर-व्योम-अधिकारी**—वैकुण्ठ लोकों के अधिष्ठाता देव; **ए माधुर्य**—यह दिव्य मधुरता; **नाहि**—नहीं है; **नारायणे**—भगवान् नारायण में भी।

अनुवाद

"गोपियों द्वारा कृष्ण के सौन्दर्य की जिस माधुरी का आस्वादन किया जाता है, वह अद्वितीय है। उस भावमयी माधुरी के समान या उससे बढ़कर कुछ भी नहीं है। यहाँ तक कि वैकुण्ठ लोकों के अधिष्ठाता नारायणों में भी वह माधुरी नहीं है। निस्सन्देह, नारायण-पर्यन्त कृष्ण के सारे अवतारों में से किसी में भी ऐसा दिव्य सौन्दर्य नहीं है।

तातेसाक्षी सेइ रमा, नारायणेर प्रियतमा,
पतिव्रता-गणेर उपास्या ।
तिँहो ये माधुर्य-लोभे, छाड़ि' सब काम-भोगे,
व्रत करि' करिला तपस्या ॥ ११६ ॥

तातेसाक्षी सेइ रमा, नारायणेर प्रियतमा,
पतिव्रता-गणेर उपास्या ।
तिंहो ग्रे माधुर्य-लोभे, छाड़ि' सब काम-भोगे,
व्रत करि' करिला तपस्या ॥ ११६ ॥

तातेसाक्षी—इस सन्दर्भ में; **साक्षी**—प्रमाण; **सेइ रमा**—वह लक्ष्मी देवी; **नारायणेर प्रिय-तमा**—नारायण की सर्वप्रिया संगिनी; **पति-व्रता-गणेर**—सभी पतिव्रता स्त्रियों में; **उपास्या**—पूज्य; **तिंहो**—उसने; **ग्रे**—उस; **माधुर्य-लोभे**—मधुरता से आकर्षित होकर; **छाड़ि'**—छोड़कर;

सब—सब कुछ; **काम-भोगे**—कृष्ण के साथ रमण करने के लिए; **व्रत करि'**—व्रत करके; **करिला तपस्या**—तपस्याएँ की।

अनुवाद

"नारायण की प्रियतमा लक्ष्मी इस सम्बन्ध में स्पष्ट प्रमाण हैं। लक्ष्मी की पूजा सारी पतिव्रता स्त्रियाँ करती हैं। उन्हीं लक्ष्मी ने कृष्ण की अद्वितीय माधुरी द्वारा मुग्ध होकर उनके साथ भोग करने की इच्छा से ही सब कुछ त्याग दिया, इस प्रकार उन्होंने कठोर व्रत लिया और कठिन तपस्या की।

সেই ত' মাধুর্য-সার, অন্য-সিদ্ধি নাহি তার,
তিঁহো—মাধুর্যাদি-গুণ-খনি ।
আর সব প্রকাশে, তাঁর দত্ত গুণ ভাসে,
যাহাঁ যত প্রকাশে কার্য জানি ॥ ১১৭॥

সেই ত' মাধুর্য-সার, অন্য-সিদ্ধি নাহি তার,
তিঁহো—মাধুর্যাদি-গুণ-খনি ।
আর সব প্রকাশে, তাঁর দত্ত গুণ ভাসে,
যাহাঁ যত প্রকাশে কার্য জানি ॥ ১১৭॥

সেই ত' মাধুর্য-সার—वही मधुरता का सार है; **অন্য-সিদ্ধি**—किसी अन्य प्रकार से सिद्धि; **নাহি**—नहीं है; **তার**—उसकी; **তিঁহো**—भगवान् कृष्ण; **মাধুর্য-আদি-গুণ-খনি**—माधुर्य आदि दिव्य रसों की खान; **আর সব**—अन्य सभी; **প্রকাশে**—प्राकट्यों में; **তাঁর**—उनके; **দত্ত**—दिये हुए; **গুণ**—दिव्य गुण; **ভাসে**—दर्शाते हैं; **যাহাঁ**—जहाँ; **যত**—जितना; **প্রকাশে**—उस अवतार में; **কার্য**—कार्य करना है; **জানি**—मैं मानता हूँ।

अनुवाद

"कृष्ण के शरीर की मधुर कान्ति का सार इतना पूर्ण है कि उससे बढ़कर कोई पूर्णता नहीं है। वे दिव्य गुणों की नित्य खान हैं। उनके अन्य रूपों तथा व्यक्तिगत विस्तारों में ऐसे गुणों का केवल आंशिक प्रदर्शन ही होता है। इस तरह हम उनके समस्त निजी व्यक्तिगत विस्तारों को समझ पाते हैं।

গোপী-ভাব-দরপণ, নব নব ক্ষণে ক্ষণ,
তার আগে কৃষ্ণের মাধুর্য ।

দোঁহে করে হুড়াহুড়ি, বাড়ে, মুখ নাহি মুড়ি,
নব নব দোঁহার প্রাচুর্য ॥ ১১৮॥

গোপী-ভাব-দরপণ, নব নব ক্ষণে ক্ষণ,
তার আগে কৃষ্ণের মাধুর্য্য ।
দোঁহে করে হুড়াহুড়ি, বাড়ে, মুখ নাহি মুড়ি,
নব নব দোঁহার প্রাচুর্য্য ॥ ১১৮॥

গোপী-ভাব-দরপণ—গোপীयों का भाव एक दर्पण के समान है; **नव नव क्षणे क्षण**—प्रत्येक क्षण नया नया; **तार आगे**—उसके समान; **कृष्णेर माधुर्य्य**—कृष्ण की सुन्दरता का माधुर्य; **दोंहे**—दोनों; **करे**—करते हैं; **हुड़ाहुड़ि**—आपसी होड़; **बाड़े**—बढ़ती है; **मुख नाहि मुड़ि**—मुख नहीं मोड़ते; **नव नव**—नये नये; **दोंहार**—उन दोनों की; **प्राचुर्य्य**—प्रचूरता।

अनुवाद

"गोपियाँ तथा कृष्ण दोनों ही पूर्ण हैं। गोपियों का प्रेमभाव उस दर्पण के समान है, जो प्रतिक्षण नूतन होता जाता है और कृष्ण की शारीरिक कान्ति तथा माधुरी को प्रतिबिम्बित करता है। इस तरह एक होड़ सी लग जाती है। चूँकि दोनों पक्षों में से कोई हार नहीं मानता, इसलिए उनकी लीलाएँ नवीनतर होती जाती हैं और दोनों पक्षों में निरन्तर वृद्धि होती जाती है।

কর্ম, তপ, যোগ, জ্ঞান, বিধি-ভক্তি, জপ, ধ্যান,
ইহা হৈতে মাধুর্য দুর্লভ ।
কেবল যে রাগ-মার্গে, ভজে কৃষ্ণে অনুরাগে,
তারে কৃষ্ণ-মাধুর্য সুলভ ॥ ১১৯॥

কর্ম, তপ, য়োগ, জ্ঞান, বিধি-ভক্তি, জপ, ধ্যান,
ইহা হৈতে মাধুর্য্য দুর্লভ ।
কেবল য়ে রাগ-মার্গে, ভজে কৃষ্ণে অনুরাগে,
তারে কৃষ্ণ-মাধুর্য্য সুলভ ॥ ১১৯॥

कर्म—सकाम कर्म; **तप**—तपस्याएँ; **य़ोग**—योगाभ्यास; **ज्ञान**—तार्किक ज्ञानार्जन; **विधि-भक्ति**—भक्ति की विधियों का पालन; **जप**—जप; **ध्यान**—ध्यान; **इहा हैते**—इन सबसे; **माधुर्य्य**—कृष्ण की मधुरता; **दुर्लभ**—अनुभव करना अत्यन्त कठिन है; **केवल**—केवल; **य़े**—

जो; **राग-मार्गे**—रागानुग प्रेमभाव के मार्ग द्वारा; **भजे**—उपासना करता है; **कृष्णे**—भगवान् कृष्ण की; **अनुरागे**—दिव्य भावनाओं के साथ; **तारे**—उसे; **कृष्ण-माधुर्य्य**—कृष्ण की मधुरता; **सुलभ**—बहुत सरलता से प्राप्त हो जाती है।

अनुवाद

"कृष्ण तथा गोपियों के पारस्परिक व्यवहार से उत्पन्न दिव्य रसों का आस्वादन कर्म, तप, योग, ज्ञान, विधि-भक्ति, मन्त्र योग या ध्यान द्वारा नहीं किया जा सकता। इस माधुरी का आस्वादन केवल मुक्त पुरुषों के स्वतःस्फूर्त रागानुग प्रेम द्वारा किया जा सकता है, जो परम अनुराग के साथ कृष्ण-नाम का कीर्तन करते हैं।

সেই-রূপ ব্রজাশ্রয়, ঐশ্বর্য-মাধুর্যময়,
দিব্য-গুণ-গণ-রত্নালয় ।
আনের বৈভব-সত্তা, কৃষ্ণ-দত্ত ভগবত্তা,
কৃষ্ণ——সর্ব-অংশী, সর্বাশ্রয় ॥ ১২০॥

सेइ-रूप व्रजाश्रय, ऐश्वर्य्य-माधुर्य्यमय,
दिव्य-गुण-गण-रत्नालय ।
आनेर वैभव-सत्ता, कृष्ण-दत्त भगवत्ता,
कृष्ण——सर्व-अंशी, सर्वाश्रय ॥ १२० ॥

सेइ-रूप—वह दिव्य सुन्दरता; **व्रज-आश्रय**—जिसका वास वृन्दावन में है; **ऐश्वर्य्य-माधुर्य्य-मय**—ऐश्वर्य तथा प्रेम के माधुर्य से पूर्ण है; **दिव्य-गुण-गण**—दिव्य गुणों के; **रत्न-आलय**—सभी रत्नों का स्रोत; **आनेर**—दूसरों के; **वैभव-सत्ता**—ऐश्वर्यों की उपस्थिति; **कृष्ण-दत्त**—सभी कृष्ण द्वारा दिये गये; **भगवत्ता**—पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् के गुण; **कृष्ण**—भगवान् कृष्ण; **सर्व-अंशी**—उन सभी के मूल स्रोत; **सर्व-आश्रय**—उन सभी के आश्रय।

अनुवाद

"कृष्ण तथा गोपियों के बीच ऐसा भावमय आदान-प्रदान केवल वृन्दावन में सम्भव है, जो दिव्य प्रेम के ऐश्वर्य से ओतप्रोत है। कृष्ण का स्वरूप समस्त दिव्य गुणों का मूल स्रोत है। यह रत्नों की खान के समान है। कृष्ण के व्यक्तिगत विस्तारों के पास जितना ऐश्वर्य होता है, उसे कृष्ण द्वारा प्रदत्त समझा जाना चाहिए। अतः कृष्ण आदि स्रोत हैं तथा सबके आश्रय हैं।

श्री, लज्जा, दया, कीर्ति, धैर्य, वैशारदी मति,
एइ सब कृष्णे प्रतिष्ठित ।
सुशील, मृदु, वदान्य, कृष्ण-सम नाहि अन्य,
कृष्ण करे जगतेर हित ॥ १२१ ॥

श्री, लज्जा, दया, कीर्ति, धैर्य, वैशारदी मति,
एइ सब कृष्णे प्रतिष्ठित ।
सुशील, मृदु, वदान्य, कृष्ण-सम नाहि अन्य,
कृष्ण करे जगतेर हित ॥ १२१ ॥

श्री—सुन्दरता; **लज्जा**—विनम्रता; **दया**—दया; **कीर्ति**—यश; **धैर्य**—धीरता; **वैशारदी**—दक्षता; **मति**—बुद्धिमानी; **एइ सब**—ये सब; **कृष्णे**—भगवान् कृष्ण में; **प्रतिष्ठित**—उपस्थित हैं; **सु-शील**—भद्र; **मृदु**—कोमल; **वदान्य**—उदार; **कृष्ण-सम**—कृष्ण के समान; **नाहि**—कोई नहीं है; **अन्य**—दूसरा; **कृष्ण**—भगवान् कृष्ण; **करे**—करते हैं; **जगतेर**—संसार का; **हित**—कल्याण।

अनुवाद

"सौन्दर्य, विनम्रता, दया, कीर्ति, धैर्य तथा दक्ष बुद्धि—ये सभी कृष्ण में प्रकट होते हैं। किन्तु इनके अतिरिक्त भी उनमें सदाचार, मृदुता तथा उदारता के अन्य गुण पाये जाते हैं। वे सारे जगत् के लिए कल्याण-कार्य भी करते हैं। ये सारे गुण नारायण जैसे अंशों में दृष्टिगोचर नहीं होते।

तात्पर्य

श्रील भक्तिविनोद ठाकुर ने कहा है कि सौन्दर्य, विनम्रता, दया, कीर्ति, धैर्य तथा दक्ष बुद्धि अत्यन्त सुन्दर गुण हैं और जब ये नारायण के व्यक्तित्व में प्रकट होते हैं, तब यह समझना चाहिए कि ये कृष्ण द्वारा नारायण को प्रदान किये गये हैं। सदाचार, मृदुता तथा उदारता के गुण केवल कृष्ण में मिलते हैं। केवल कृष्ण सारे जगत् के लिए कल्याण-कार्य करते हैं।

कृष्ण देखि' नाना जन, कैल निमिषे निन्दन,
ब्रजे विधि निन्दे गोपी-गण ।
सेइ सब श्लोक पड़ि', महाप्रभु अर्थ करि',
सुखे माधुर्य करे आस्वादन ॥ १२२ ॥

कृष्ण देखि' नाना जन, कैल निमिषे निन्दन,
व्रजे विधि निन्दे गोपी-गण ।
सेइ सब श्लोक पड़ि', महाप्रभु अर्थ करि',
सुखे माधुर्य्य करे आस्वादन ॥ १२२ ॥

कृष्ण—भगवान् कृष्ण; **देखि'**—देखकर; **नाना जन**—अनेक लोगों ने; **कैल**—की; **निमिषे**—नेत्रों की पलकें झपकाने के कारण; **निन्दन**—निन्दा; **व्रजे**—वृन्दावन में; **विधि**—ब्रह्माजी की; **निन्दे**—निन्दा करती हैं; **गोपी-गण**—सभी गोपियाँ; **सेइ सब**—वे सभी; **श्लोक**—श्लोक; **पड़ि'**—पढ़कर; **महाप्रभु**—श्री चैतन्य महाप्रभु; **अर्थ करि'**—व्याख्या करके; **सुखे**—आनन्द में; **माधुर्य्य**—दिव्य मधुरता; **करे**—करते हैं; **आस्वादन**—आस्वादन।

अनुवाद

"कृष्ण को देखकर विविध लोग अपनी पलकों के झपकने की निन्दा करते हैं। विशेषतया वृन्दावन में सारी गोपियाँ आँखों के इस दोष के लिए ब्रह्मा की निन्दा करती हैं।" इसके बाद श्री चैतन्य महाप्रभु ने श्रीमद्भागवत के कुछ श्लोक सुनाये और उनकी विस्तृत व्याख्या की। इस तरह उन्होंने बहुत ही सुख के साथ दिव्य माधुरी का आस्वादन किया।

यस्याननं मकर-कुण्डल-चारु-कर्ण-
भ्राजत्कपोल-सुभगं स-विलास-हासम् ।
नित्योत्सवं न ततृपुर्दृशिभिः पिबन्त्यो
नार्यो नराश्च मुदिताः कुपिता निमेश्च ॥ १२३ ॥

यस्याननं मकर-कुण्डल-चारु-कर्ण-
भ्राजत्कपोल-सुभगं स-विलास-हासम् ।
नित्योत्सवं न ततृपुर्दृशिभिः पिबन्त्यो
नार्यो नराश्च मुदिताः कुपिता निमेश्च ॥ १२३ ॥

यस्य—भगवान् कृष्ण के; **आननम्**—मुख के; **मकर-कुण्डल**—मछली जैसे कुण्डलों द्वारा; **चारु**—सुशोभित; **कर्ण**—कान; **भ्राजत्**—चमकते हुए; **कपोल**—गाल; **सु-भगम्**—कोमल; **स-विलास-हासम्**—आनन्द भाव की मुस्कान के साथ; **नित्य-उत्सवम्**—आनन्द के दिव्य उत्सव से युक्त; **न**—नहीं; **ततृपुः**—सन्तुष्ट; **दृशिभिः**—आँखों द्वारा; **पिबन्त्यः**—पीते; **नार्यः**—सभी स्त्रियाँ; **नराः**—पुरुष; **च**—तथा; **मुदिताः**—अत्यन्त प्रसन्न; **कुपिताः**—अत्यन्त क्रोधित; **निमेः**—पलकों के झपकने के कारण, ब्रह्माजी पर; **च**—तथा।

अनुवाद

"'सारे पुरुष तथा स्त्रियाँ भगवान् कृष्ण के चमकते मुख तथा उनके कानों से लटकते मकराकृति कुण्डलों की शोभा देखने के अभ्यस्त थे। उनका सुन्दर स्वरूप, उनके गाल तथा खिलवाड़ करती हँसी—ये सब मिलकर नेत्रों के लिए निरन्तर उत्सव बने रहते हैं, किन्तु आँखों का झपकना ऐसा अवरोध बन जाता है, जिससे वे उस शोभा को देख नहीं पाते। इसी कारण से पुरुष तथा स्त्रियाँ स्त्रष्टा (ब्रह्माजी) के ऊपर अत्यन्त क्रुद्ध थीं।'

तात्पर्य

यह श्लोक *श्रीमद्भागवत* (९.२४.६५) का है।

अटति यद्भवानह्नि काननं
त्रुटिर्युगायते त्वामपश्यताम् ।
कुटिल-कुन्तलं श्री-मुखं च ते
जड़ उदीक्षतां पक्ष्म-कृद्दृशाम् ॥ १२४॥

अटति—जाते हैं; **यत्**—जब; **भवान्**—आप; **अह्नि**—दिन के समय; **काननम्**—वन में; **त्रुटिः**—आधा क्षण; **युगायते**—एक युग की भाँति प्रतीत होता है; **त्वाम्**—आपको; **अपश्यताम्**—उनको जो नहीं देख पाते; **कुटिल-कुन्तलम्**—घुँघराले बालों से सुशोभित; **श्री-मुखम्**—सुन्दर मुख को; **च**—तथा; **ते**—आपके; **जड़ः**—मूर्ख; **उदीक्षताम्**—देखकर; **पक्ष्म-कृत्**—पलकों के रचयिता; **दृशाम्**—आँखों की।

अनुवाद

"'हे कृष्ण, जब आप दिन में जंगल चले जाते हो और हम आपके सुन्दर मुख को, जो सुन्दर घुंघराले केशों से घिरा हुआ है, नहीं देखतीं तब आधे क्षण का समय हमारे लिए एक युग के बराबर लगता है। तब हम

उस स्रष्टा को, जिसने आपको देखने वाली आँखों के ऊपर पलकें लगा दी हैं, मात्र मूर्ख समझती हैं।'

तात्पर्य

यह श्लोक गोपियों की उक्ति है, जो *श्रीमद्भागवत* (१०.३१.१५) में आई है।

काम-गायत्री-मन्त्र-रूप, हय कृष्णेर स्वरूप,
सार्ध-चब्बिश अक्षर तार हय ।
से अक्षर 'चन्द्र' हय, कृष्णे करि' उदय,
त्रिजगत्कैला काममय ॥ १२५॥

काम-गायत्री-मन्त्र-रूप, हय कृष्णेर स्वरूप,
सार्ध-चब्बिश अक्षर तार हय ।
से अक्षर 'चन्द्र' हय, कृष्णे करि' उदय,
त्रिजगत् कैला काममय ॥ १२५॥

काम-गायत्री-मन्त्र-रूप—काम गायत्री नामक मन्त्र; **हय**—है; **कृष्णेर स्वरूप**—कृष्ण के साथ एकरूप; **सार्ध-चब्बिश**—२४ १/२; **अक्षर**—अक्षर; **तार**—उसके; **हय**—हैं; **से अक्षर**—ये अक्षर; **चन्द्र हय**—चन्द्रमा के समान हैं; **कृष्णे**—भगवान् कृष्ण में; **करि' उदय**—जागते हैं; **त्रि-जगत्**—तीनों लोक; **कैला**—कर दिये; **काम-मय**—इच्छाओं से पूर्ण।

अनुवाद

"पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् कृष्ण वैदिक मन्त्र काम-गायत्री से अभिन्न हैं, जो साढ़े चौबीस अक्षरों से रचित है। वे अक्षर उन चन्द्रमाओं के सदृश हैं, जो कृष्ण में उदित होते हैं। इस तरह तीनों जगत् काममय हो जाते हैं।

सखि हे, कृष्ण-मुख—द्विज-राज-राज
कृष्ण-वपु-सिंहासने, वसि' राज्य-शासने, ।
करे सङ्गे चन्द्रेर समाज ॥ १२६॥

सखि हे, कृष्ण-मुख—द्विज-राज-राज
कृष्ण-वपु-सिंहासने, वसि' राज्य-शासने, ।
करे सङ्गे चन्द्रेर समाज ॥ १२६॥

सखि हे—हे प्रिय सखी; **कृष्ण-मुख**—भगवान् कृष्ण का मुख; **द्विज-राज-राज**—चन्द्रमाओं का राजा; **कृष्ण-वपु**—कृष्ण के दिव्य शरीर के; **सिंहासने**—सिंहासन पर; **वसि'**—बैठकर; **राज्य-शासने**—राज्य का शासन; **करे**—करता है; **सङ्गे**—संग में; **चन्द्रेर समाज**—चन्द्रमाओं का समाज।

अनुवाद

"कृष्ण का मुख समस्त चन्द्रमाओं का राजा है और कृष्ण का शरीर सिंहासन है। इस तरह राजा चन्द्रमाओं के समाज पर शासन करता है।

तात्पर्य

कृष्ण के मुख को चन्द्रमाओं का राजा कहा गया है और उनके शरीर को सिंहासन मना जाता है। अन्य सारे चन्द्रमा गौण माने गये हैं। बायाँ गाल एक चन्द्रमा है और दायाँ गाल दूसरा चन्द्रमा है। उनका ललाट आधा चन्द्रमा माना गया है, कृष्ण के ललाट पर चन्दन का चिह्न भी एक चन्द्रमा माना गया है। उनके हाथों तथा पाँवों के नाखून भी विभिन्न चन्द्रमा हैं।

दुई गण्ड सुचिक्कण, जिनि' मणि-सुदर्पण,
सेई दुई पूर्ण-चन्द्र जानि ।
ललाटे अष्टमी-इन्दु, ताहाते चन्दन-विन्दु,
सेई एक पूर्ण-चन्द्र मानि ॥ १२७॥

दुइ गण्ड सुचिक्कण, जिनि' मणि-सुदर्पण,
सेइ दुइ पूर्ण-चन्द्र जानि ।
ललाटे अष्टमी-इन्दु, ताहाते चन्दन-बिन्दु,
सेइ एक पूर्ण-चन्द्र मानि ॥ १२७॥

दुइ—दोनों; **गण्ड**—गाल; **सु-चिक्कण**—अत्यन्त चमकदार; **जिनि'**—जीत लेते हैं; **मणि-सु-दर्पण**—चमकते हीरों को; **सेइ दुइ**—वे दोनों; **पूर्ण-चन्द्र**—पूर्ण चन्द्रमा; **जानि**—मैं मानता हूँ; **ललाटे**—माथे पर; **अष्टमी-इन्दु**—अष्टमी का अर्ध चन्द्रमा; **ताहाते**—उस पर; **चन्दन-बिन्दु**—चन्दन के लेप की बिन्दु; **सेइ**—वह; **एक**—एक; **पूर्ण-चन्द्र**—पूर्ण चन्द्रमा; **मानि**—मैं मानता हूँ।

अनुवाद

"कृष्ण के दोनों गाल चमकीले मणियों जैसे हैं। दोनों पूर्ण चन्द्रमा

माने जाते हैं। उनका ललाट अर्धचन्द्रमा माना गया है और वहाँ लगे चन्दन के बिन्दु को पूर्ण चन्द्रमा माना गया है।

কর-নখ-চান্দের হাট, বংশী-উপর করে নাট,
তার গীত মুরলীর তান ।
পদ-নখ-চন্দ্র-গণ, তলে করে নর্তন,
নূপুরের ধ্বনি যার গান ॥১২৮॥

कर-नख-चान्देर हाट, वंशी-उपर करे नाट,
तार गीत मुरलीर तान ।
पद-नख-चन्द्र-गण, तले करे नर्तन,
नूपुरेर ध्वनि य़ार गान ॥ १२८ ॥

कर-नख—हाथों के नाखूनों का; **चान्देर**—पूर्ण चन्द्रमाओं का; **हाट**—बाजार; **वंशी**—बाँसुरी; **उपर**—पर; **करे**—करते हैं; **नाट**—नृत्य; **तार**—उनके; **गीत**—गीत; **मुरलीर तान**—बांसुरी के सुर; **पद-नख**—चरणों के नाखूनों के; **चन्द्र-गण**—अनेक पूर्ण चन्द्रमा; **तले**—भूमि पर; **करे**—करते हैं; **नर्तन**—नृत्य; **नूपुरेर**—घुँघरूओं की; **ध्वनि**—ध्वनि; **य़ार**—जिनका; **गान**—गीत।

अनुवाद

"उनके हाथ के नाखून अनेक पूर्ण चन्द्रमा हैं और वे उनके हाथ की वंशी पर नृत्य करते हैं। उनका गीत उस वंशी की तान है। उनके पाँवों के नाखून भी अनेक पूर्ण चन्द्रमा हैं, जो भूमि पर नृत्य करते हैं। उनका गीत उनके नूपुरों की झंकार है।

নাচে মকর-কুণ্ডল, নেত্র—লীলা-কমল,
বিলাসী রাজা সতত নাচায় ।
ভ্রূ—ধনু, নেত্র—বাণ, ধনুর্গুণ—দুই কাণ,
নারী-মন-লক্ষ্য বিন্ধে তায় ॥১২৯॥

नाचे मकर-कुण्डल, नेत्र—लीला-कमल,
विलासी राजा सतत नाचाय ।
भ्रू—धनु, नेत्र—बाण, धनुर्गुण—दुइ काण,
नारी-मन-लक्ष्य विन्धे ताय ॥ १२९ ॥

नाचे—नाचते हैं; **मकर-कुण्डल**—मछली के आकार के कुण्डल; **नेत्र**—आँखे; **लीला**—लीला के लिए; **कमल**—कमल के समान; **विलासी**—आनन्द लेने वाले; **राजा**—राजा; **सतत नाचाय**—हमेशा नचाते हैं; **भ्रू**—दोनों भौहों को; **धनु**—धनुष की तरह; **नेत्र**—आँखों के; **बाण**—तीरों के समान; **धनुर्-गुण**—धनुष की प्रत्यंचा; **दुइ काण**—दोनों कान; **नारी-मन**—गोपियों के मनों कों; **लक्ष्य**—निशाना बनाकर; **विन्धे**—चीरते हैं; **ताय**—वहाँ।

अनुवाद

"कृष्ण का मुख विलासी राजा है। उनका वह पूर्ण चन्द्रमा रूप मुख उनके मकराकृति कुण्डलों तथा कमलनेत्रों को नचाने वाला है। उनकी भौहें धनुष के समान हैं और उनकी आँखें बाणों जैसी हैं। उनके कान उस धनुष की डोरी पर स्थित हैं और जब उनकी आँखें उनके कानों तक फैलती हैं, तब कृष्ण गोपियों के हृदयों को बींध देते हैं।

এই চান্দের বড় নাট, পসারি' চান্দের হাট,
বিনিমূলে বিলায় নিজামৃত ।
কাহোঁ স্মিত-জ্যোত্স্নামৃতে, কাঁহারে অধরামৃতে,
সব লোক করে আপ্যায়িত ॥ ১৩০॥

এइ চান্দের বড় নাট, পসারি' চান্দের হাট,
বিনিমূলে বিলায় নিজামৃত ।
কাহোঁ স্মিত-জ্যোত্স্নামৃতে, কাঁহারে অধরামৃতে,
সব লোক করে আপ্যায়িত ॥ ১৩০॥

এइ চান্দের—इस चन्द्रमुख का; **বড়**—बड़ा; **নাট**—नृत्य; **পসারি'**—फैलाकर; **চান্দের হাট**—पूर्ण चन्द्रमाओं का बाजार; **বিনিমূলে**—बिना मूल्य के; **বিলায়**—बाँटते हैं; **নিজ-অমৃত**—इसका निजी अमृत; **কাহোঁ**—कुछ लोगों को; **স্মিত-জ্যোত্স্না-অমৃতে**—मधुर मुस्कान की चन्द्रकिरणों के अमृत द्वारा; **কাঁহারে**—कुछ को; **অধর-অমৃতে**—होठों के अमृत द्वारा; **সব লোক**—सभी लोगों को; **করে আপ্যায়িত**—प्रसन्न करते हैं।

अनुवाद

"उनके मुख का नृत्य करता स्वरूप अन्य सभी पूर्ण चन्द्रमाओं से बाजी मार ले जाता है और पूर्ण चन्द्रमाओं के बाजार (हाट) को विस्तृत करता है। कृष्ण के मुख का अमृत अमूल्य होते हुए भी सबमें वितरित

किया जाता है। कुछ उनकी मृदु हँसी की चन्द्र-किरणों को खरीदते हैं, तो कुछ उनके होठों के अमृत को। इस तरह वे सबको तुष्ट करते हैं।

বিপুলায়তারুণ, মদন-মদ-ঘূর্ণন,
মন্ত্রী যার এ দুই নয়ন ।
লাবণ্য-কেলি-সদন, জন-নেত্র-রসায়ন,
সুখময় গোবিন্দ-বদন ॥ ১৩১॥

विपुलायतारुण, मदन-मद-घूर्णन,
मन्त्री य्यार ए दुइ नयन ।
लावण्य-केलि-सदन, जन-नेत्र-रसायन,
सुखमय गोविन्द-वदन ॥ १३१॥

विपुल-आयत—विशाल तथा फैली हुई; **अरुण**—लालिमायुक्त; **मदन-मद**—कामदेव का गर्व; **घूर्णन**—चूर करती हुई; **मन्त्री**—मन्त्री; **य्यार**—जिसके; **ए**—ये; **दुइ**—दोनों; **नयन**—नेत्र; **लावण्य-केलि**—सुन्दरता की लीलाओं के; **सदन**—निवास; **जन-नेत्र-रस-आयन**—सभी की आँखों को आनन्द देने वाला; **सुख-मय**—सुख से पूर्ण; **गोविन्द-वदन**—भगवान् कृष्ण का मुख।

अनुवाद

"कृष्ण के दो विस्फारित लाल लाल नेत्र हैं। ये राजा के दो मन्त्री हैं और सुन्दर नेत्रों वाले कामदेव के गर्व का दमन करने वाले हैं। सुख से पूर्ण गोविन्द का वह मुख सौन्दर्य विलास का घर है और यह सबके नेत्रों को अत्यन्त सुहावना लगता है।

যাঁর পুণ্য-পুঞ্জ-ফলে, সে-মুখ-দর্শন মিলে,
দুই আঙ্খি কি করিবে পানে? ।
দ্বিগুণ বাড়ে তৃষ্ণা-লোভ, পিতে নারে——মনঃ-ক্ষোভ,
দুঃখে করে বিধির নিন্দনে ॥ ১৩২॥

য্যাঁর পুণ্য-পুঞ্জ-ফলে, সে-মুখ-দর্শন মিলে,
দুই আঙ্খি কি করিবে পানে? ।
দ্বিগুণ বাড়ে তৃষ্ণা-লোভ, পিতে নারে——মনঃ-ক্ষোভ,
দুঃখে করে বিধির নিন্দনে ॥ ১৩২॥

याँर—जिसके; **पुण्य-पुञ्ज-फले**—अनेक पुण्यकर्मों के फलस्वरूप; **से-मुख**—उस चेहरे का; **दर्शन**—दर्शन; **मिले**—यदि किसी को मिलता है; **दुइ आङ्खि**—दो आँखें; **कि**—कैसे; **करिबे**—करेंगी; **पाने**—पान; **द्वि-गुण**—दो गुना; **बाड़े**—बढ़ जाती है; **तृष्णा-लोभ**—लोभ तथा प्यास; **पिते**—पीने की; **नारे**—असमर्थ; **मनः-क्षोभ**—मन की अधीरता; **दुःखे**—अत्यन्त दुःख में; **करे**—करता है; **विधिर**—सृष्टिकर्ता ब्रह्मा की; **निन्दने**—निन्दा।

अनुवाद

"यदि किसी को भक्ति द्वारा पुण्यकर्मों का फल प्राप्त होता है और वह कृष्ण के मुख का दर्शन पा लेता है, तो वह अपनी केवल दो आँखों से क्या आस्वादन कर सकता है? तब कृष्ण के अमृतमय मुख को देखने से उसका लोभ तथा उसकी तृष्णा दोनों दुगुने बढ़ जाते हैं। उस अमृत को ठीक से पी न सकने के कारण मनुष्य दुःखी होता है और स्त्रष्टा की आलोचना इसलिए करने लगता है कि उसने दो से अधिक आँखें क्यों नहीं दीं।

ना दिलेक लक्ष-कोटि, सबे दिला आङ्खि दुटि,
तातेदिला निमिष-आच्छादन ।
विधि—जड़ तपोधन, रस-शून्य तार मन,
नाहि जाने योग्य सृजन ॥ १३३॥

ना दिलेक लक्ष-कोटि, सबे दिला आङ्खि दुटि,
तातेदिला निमिष-आच्छादन ।
विधि—जड़ तपोधन, रस-शून्य तार मन,
नाहि जाने योग्य सृजन ॥ १३३॥

ना दिलेक—नहीं प्रदान की; **लक्ष-कोटि**—लाखों करोड़ों; **सबे**—केवल; **दिला**—दीं; **आङ्खि दुटि**—दो आँखे; **तातेदिला**—उनमें; **निमिष-आच्छादन**—पलकें; **विधि**—ब्रह्माजी; **जड़**—मूर्ख; **तपः-धन**—तपस्याओं की पूँजी; **रस-शून्य**—रस से रहित; **तार**—उनका; **मन**—मन; **नाहि जाने**—नहीं जानते; **योग्य**—उचित प्रकार से; **सृजन**—सृष्टि करना।

अनुवाद

"जब कृष्ण का मुख देखने वाला इस तरह असन्तुष्ट हो जाता है, तो

वह सोचने लगता है, 'विधाता ने मुझे लाखों-करोड़ों आँखें क्यों नहीं दीं? उसने मुझे केवल दो ही आँखें क्यों दीं? यहाँ तक कि ये दोनों आँखें भी पलक झपकने के कारण विचलित हो उठती हैं, जिससे मैं कृष्ण के मुख को लगातार देख नहीं पाता।' इस तरह मनुष्य विधाता को कोसता है कि वह कठिन तपस्या में लगे रहने के कारण शुष्क तथा रसविहीन है। 'विधाता केवल एक शुष्क (रसशून्य) स्रष्टा है। वह यह भी नहीं जानता कि किस तरह वस्तुओं का सृजन किया जाए और उन्हें उचित स्थानों पर रखा जाए।

যে দেখিবে কৃষ্ণানন, তার করে দ্বি-নয়ন,
বিধি হঞা হেন অবিচার ।
মোর যদি বোল ধরে, কোটি আঁখি তার করে,
তবে জানি যোগ্য সৃষ্টি তার ॥ ১৩৪॥

য়ে দেখিবে কৃষ্ণানন, তার করে দ্বি-নয়ন,
বিধি হঞা হেন অবিচার ।
মোর য়দি বোল ধরে, কোটি আঙ্খি তার করে,
তবে জানি য়োগ্য সৃষ্টি তার ॥ ১৩৪॥

য়ে—जो कोई भी; **देखिबे**—देखेगा; **कृष्ण-आनन**—कृष्ण का मुख; **तार**—उसकी; **करे**—बनाते हैं; **द्वि-नयन**—दो आँखें; **विधि**—सृष्टिकर्ता ब्रह्माजी; **हञा**—होकर; **हेन**—ऐसे; **अविचार**—विचार रहित; **मोर**—मेरी; **य़दि**—अगर; **बोल**—बात; **धरे**—मानते हैं; **कोटि आङ्खि**—करोड़ आँखें; **तार**—उसकी; **करे**—बना दें; **तबे जानि**—जब मैं समझूँगा; **य़ोग्य**—उचित; **सृष्टि**—रचना; **तार**—उसकी।

अनुवाद

"'स्रष्टा कहता है, "जो कृष्ण के सुन्दर मुख का दर्शन करना चाहते हैं, उनकी दो ही आँखें हों।" जरा इस स्रष्टा कहलाने वाले व्यक्ति द्वारा प्रदर्शित अविचार को तो देखो। यदि वह मेरा परामर्श मानता, तो वह कृष्ण का मुख देखने वाले को करोड़ों आँखें देता। यदि वह मेरे इस परामर्श को मान ले, तो मैं कहूँगा कि वह अपने कार्य में पटु है।'

কৃষ্ণাঙ্গ-মাধুর্য—সিন্ধু, সুমধুর মুখ—ইন্দু,
অতি-মধু স্মিত—সুকিরণে ।
এ-তিনে লাগিল মন, লোভে করে আস্বাদন,
শ্লোক পড়ে স্বহস্ত-চালনে ॥ ১৩৫ ॥

কৃষ্ণাঙ্গ-মাধুর্য্য—সিন্ধু, সুমধুর মুখ—ইন্দু,
অতি-মধু স্মিত—সুকিরণে ।
এ-তিনে লাগিল মন, লোভে করে আস্বাদন,
শ্লোক পড়ে স্বহস্ত-চালনে ॥ ১৩৫ ॥

কৃষ্ণ-অঙ্গ—কৃষ্ণ के दिव्य शरीर की; **माधुर्य्य**—मधुरता का; **सिन्धु**—समुद्र; **सु-मधुर**—अत्यन्त मधुर; **मुख**—चेहरा; **इन्दु**—पूर्ण चन्द्रमा के समान; **अति-मधु**—असीमित रूप से मधुर; **स्मित**—मुस्कान; **सु-किरणे**—चन्द्र किरणों का प्रकाश; **ए-तिने**—ये तीनों; **लागिल मन**—मन को आकर्षित करते हैं; **लोभे**—अधिक लालच के साथ; **करे आस्वादन**—आस्वादन करते हैं; **श्लोक पड़े**—श्लोक पढ़कर; **स्व-हस्त-चालने**—अपना हाथ हिलाते हुए।

अनुवाद

"भगवान् श्रीकृष्ण के दिव्य रूप की उपमा सागर से दी गई है। उस सागर के ऊपर श्रीकृष्ण का मुख रूपी चन्द्रमा विशेष रूप से अद्भुत दृश्य है और इससे भी अधिक अद्वितीय दूसरा दृश्य उनकी मुस्कान है, जो अत्यन्त मधुर है और चन्द्रमा की चमकीली किरणों जैसी है।" सनातन गोस्वामी से ये बातें बतलाते-बतलाते श्री चैतन्य महाप्रभु एक-एक करके सारी बातें स्मरण करने लगे। उन्होंने भावावेश में अपने हाथ हिलाते हुए एक श्लोक सुनाया।

মধুরং মধুরং বপুরস্য বিভোর্
মধুরং মধুরং বদনং মধুরম্ ।
মধু-গন্ধি মৃদু-স্মিতমেতদহো
মধুরং মধুরং মধুরং মধুরম্ ॥ ১৩৬ ॥

মধুরং মধুরং বপুরস্য বিভোর্
মধুরং মধুরং বদনং মধুরম্ ।
মধু-গন্ধি মৃদু-স্মিতমেতদহো
মধুরং মধুরং মধুরং মধুরম্ ॥ ১৩৬ ॥

मधुरम्—मधुर; **मधुरम्**—मधुर; **वपुः**—दिव्य स्वरूप; **अस्य**—उनका; **विभोः**—भगवान् का; **मधुरम्**—मधुर; **मधुरम्**—मधुर; **वदनम्**—चेहरा; **मधुरम्**—और अधिक मधुर; **मधु-गन्धि**—शहद की खुशबु; **मृदु-स्मितम्**—मंद हास्य; **एतत्**—यह; **अहो**—हे मेरे प्रभु; **मधुरम्**—मधुर; **मधुरम्**—मधुर; **मधुरम्**—मधुर; **मधुरम्**—और भी मधुर।

अनुवाद

"'हे प्रभु, कृष्ण का दिव्य शरीर अत्यन्त मधुर है और उनका मुख उनके शरीर से भी अधिक मधुर है। उनके मुख पर मृदु हँसी, जो मधु-गन्ध की तरह है, और भी मधुर है।'

तात्पर्य

यह श्लोक बिल्वमंगल ठाकुर कृत *कृष्णकर्णामृत* (९२) से उद्धृत है।

सनातन, कृष्ण-माधुर्य—अमृतेर सिन्धु
मोर मन—सन्निपाति, सब पिते करे मति, ।
दुर्दैव-वैद्य ना देय एक बिन्दु ॥ १३७॥

सनातन, कृष्ण-माधुर्य—अमृतेर सिन्धु
मोर मन—सन्निपाति, सब पिते करे मति, ।
दुर्दैव-वैद्य ना देय एक बिन्दु ॥ १३७॥

सनातन—मेरे प्रिय सनातन; **कृष्ण-माधुर्य**—भगवान् कृष्ण की मधुरता; **अमृतेर सिन्धु**—अमृत का समुद्र; **मोर मन**—मेरा मन; **सन्निपाति**—सन्निपात का रोग; **सब**—समस्त; **पिते**—पीने के लिए; **करे**—करता है; **मति**—इच्छा; **दुर्दैव-वैद्य**—निषेध करने वाला वैद्य; **ना**—नहीं; **देय**—देता; **एक**—एक; **बिन्दु**—बूँद।

अनुवाद

"हे सनातन, कृष्ण की मधुरता अमृत के सिन्धु जैसी है। यद्यपि मेरा मन इस समय सन्निपात से ग्रस्त है और मैं उस समूचे समुद्र को पी लेना चाहता हूँ, किन्तु दुर्दैव वैद्य मुझे उसकी एक बूँद भी पीने की अनुमति नहीं दे रहा।

तात्पर्य

जब शरीर में तीन तत्त्वों—कफ, पित्त तथा वायु तीनों दोषों का मेल होता है, तो सन्निपात हो जाता है। चैतन्य महाप्रभु ने कहा—"मेरा यह रोग भगवान्

कृष्ण के निजी स्वरूप से उत्पन्न होता है। तीन तत्त्व हैं—कृष्ण का शारीरिक सौन्दर्य, उनके मुख का सौन्दर्य तथा उनकी हँसी का सौन्दर्य। इन तीनों सौन्दर्यों से आहत होकर मेरे मन को सन्निपात हो जाता है। यह कृष्ण के सौन्दर्य रूपी सागर को पी जाना चाहता है, किन्तु चूँकि मैं सन्निपात से पीड़ित हूँ, अत: मेरे वैद्य, जो कि साक्षात् श्रीकृष्ण हैं, इस सागर की एक बूँद भी नहीं पीने देते।" इस तरह श्री चैतन्य महाप्रभु भावावेश में थे, क्योंकि वे अपने आपको गोपी-भाव में प्रस्तुत कर रहे थे। गोपियाँ कृष्ण के शरीर से निकलने वाले माधुर्य रूपी सागर को पी जाना चाहती थीं, लेकिन कृष्ण ने उन्हें निकट नहीं आने दिया। फलत: कृष्ण से मिलने की उनकी इच्छा बढ़ गई, किन्तु कृष्ण के स्वरूप का अमृत न पी पाने के कारण वे अत्यन्त दु:खी हो गईं।

কৃষ্ণাঙ্গ—লাবণ্য-পূর, মধুর হৈতে সুমধুর,
তাতে যেই মুখ সুধাকর ।
মধুর হৈতে সুমধুর, তাহা হইতে সুমধুর,
তার যেই স্মিত জ্যোত্স্না-ভর ॥ ১৩৮॥

कृष्णाङ्ग—लावण्य-पूर, मधुर हैते सुमधुर,
ताते ग्रेइ मुख सुधाकर ।
मधुर हैते सुमधुर, ताहा हइते सुमधुर,
तार ग्रेइ स्मित ज्योत्स्ना-भर ॥ १३८॥

कृष्ण-अङ्ग—कृष्ण के अँग; **लावण्य-पूर**—आकर्षक सुन्दरता का नगर; **मधुर**—मधुरता; **हैते**—की अपेक्षा; **सु-मधुर**—और अधिक मधुर; **ताते**—उस देह में; **ग्रेइ**—जो; **मुख**—चेहरा; **सुधाकर**—चन्द्रमा जैसा; **मधुर हैते सु-मधुर**—मधुरता से अधिक मधुर; **ताहा हइते**—उसकी अपेक्षा; **सु-मधुर**—और अधिक मधुर; **तार**—उनकी; **ग्रेइ**—वह; **स्मित**—मुस्कान; **ज्योत्स्ना-भर**—चन्द्र प्रकाश के समान।

अनुवाद

"कृष्ण का शरीर आकर्षक रूपों की नगरी है और यह मधुर से मधुरतर है। उनका चन्द्रमा जैसा मुख और भी मधुर है और उस चन्द्रमा जैसे मुख पर परम मन्द हँसी चाँदनी की किरणों जैसी है।

तात्पर्य

"कृष्ण के मुख पर हँसी चन्द्रमा की हँसी जैसी है, जो गोपियों के लिए अधिकाधिक सुख उत्पन्न करने वाली है।

মধুর হৈতে সুমধুর, তাহা হৈতে সুমধুর,
তাহা হৈতে অতি সুমধুর ।
আপনার এক কণে, ব্যাপে সব ত্রিভুবনে,
দশ-দিক্ব্যাপে যার পূর ॥ ১৩৯॥

मधुर हैते सुमधुर, ताहा हैते सुमधुर,
ताहा हैते अति सुमधुर ।
आपनार एक कणे, व्यापे सब त्रिभुवने,
दश-दिक् व्यापे य्यार पूर ॥ १३९॥

मधुर हैते सु-मधुर—मधुर से अधिक मधुर; **ताहा हैते**—उसकी अपेक्षा; **सु-मधुर**—और भी मधुर; **ताहा हैते**—उसकी अपेक्षा; **अति सु-मधुर**—और भी अधिक मधुर; **आपनार**—अपने; **एक कणे**—एक कण द्वारा; **व्यापे**—फैलाते हैं; **सब**—सभी; **त्रि-भुवने**—तीनों लोकों में; **दश-दिक्**—दस दिशाओं में; **व्यापे**—फैलता है; **य्यार**—जिनका; **पूर**—नगर (कृष्ण की सुन्दरता का)।

अनुवाद

"कृष्ण की हँसी सर्वाधिक मधुर है। उनकी हँसी उस पूर्ण चन्द्रमा की तरह है, जो अपनी किरणों को तीनों लोकों में—गोलोक वृन्दावन, वैकुण्ठ तथा देवी-धाम अर्थात् भौतिक जगत् में—बिखेरता है। इस तरह कृष्ण की उज्ज्वल सुन्दरता दशों दिशाओं में फैल जाती है।

স্মিত-কিরণ-সুকর্পূরে, পৈশে অধর-মধুরে,
সেই মধু মাতায় ত্রিভুবনে ।
বংশী-ছিদ্র আকাশে, তার গুণ শব্দে পৈশে,
ধ্বনি-রূপে পাঞা পরিণামে ॥ ১৪০॥

स्मित-किरण-सुकर्पूरे, पैशे अधर-मधुरे,
सेइ मधु माताय त्रिभुवने ।

वंशी-छिद्र आकाशे, तार गुण शब्दे पैशे,
ध्वनि-रूपे पाञा परिणामे ॥ १४० ॥

स्मित-किरण—कृष्ण की मुस्कान की चमक; **सु-कर्पूरे**—कपूर के समान; **पैशे**—प्रवेश करती है; **अधर-मधुरे**—होठों की मधुरता में; **सेइ मधु**—वह शहद; **ऐमाताय**—उन्मत्त करता है; **त्रि-भुवने**—तीनों लोकों को; **वंशी-छिद्र**—बाँसुरी के छेदों के; **आकाशे**—खाली स्थान में; **तार गुण**—उस मधुरता का गुण; **शब्दे**—ध्वनि में; **पैशे**—प्रवेश करता है; **ध्वनि-रूपे**—ध्वनि का रूप; **पाञा**—प्राप्त करके; **परिणामे**—परिणाम स्वरूप।

अनुवाद

"उनकी मन्द मुस्कान तथा सुगन्धित प्रकाश की तुलना कपूर से की जा सकती है, जो उनके ओठों की मधुरता में प्रविष्ट हो जाता है। वही मधुरता ध्वनि बनकर उनकी बाँसुरी के छेदों से आकाश में व्याप्त हो जाती है।

से ध्वनि चौदिके धाय, अण्ड भेदि' वैकुण्ठे याय,
बले पैशे जगतेर काणे ।
सबा मातोयाल करि', बलात्कारे आने धरि',
विशेषतः युवतीर गणे ॥ १४१ ॥

से ध्वनि—वह ध्वनि; **चौ-दिके**—चारों दिशाओं में; **धाय**—दौड़कर; **अण्ड भेदि'**—ब्रह्माण्ड के आवरण को भेदकर; **वैकुण्ठे याय**—आध्यात्मिक लोक में जाती है; **बले**—बलपूर्वक; **पैशे**—प्रवेश करती है; **जगतेर**—तीनों लोकों के; **काणे**—कानों में; **सबा**—सभी को; **मातोयाल करि'**—नशे में उन्मत्त बनकर; **बलात्कारे**—जबरदस्ती; **आने**—लाती है; **धरि'**—पकड़कर; **विशेषतः**—विशेष रूप से; **युवतीर गणे**—व्रजभूमि की युवतियों को।

अनुवाद

"कृष्ण की बाँसुरी की ध्वनि चारों दिशाओं में व्याप्त हो जाती है। यद्यपि कृष्ण अपनी बाँसुरी इस ब्रह्माण्ड के भीतर बजाते हैं, किन्तु इसकी ध्वनि ब्रह्माण्ड के आवरण को भेदकर वैकुण्ठ लोक तक जाती है। इस

तरह यह ध्वनि सारे निवासियों के कानों में प्रवेश करती है। यह विशेष रूप से गोलोक वृन्दावन धाम में प्रवेश करती है और व्रजभूमि की युवतियों के मनों को आकृष्ट करके उन्हें बलपूर्वक वहाँ ले जाती है, जहाँ कृष्ण उपस्थित होते हैं।

ध्वनि—बड़ उद्धत, पतिव्रतार भाङ्गे व्रत,
पति-कोल हैते टानि' आने ।
वैकुण्ठेर लक्ष्मी-गणे, येइ करे आकर्षणे,
तार आगे केबा गोपी-गणे ॥ १४२॥

ध्वनि—बड़ उद्धत, पतिव्रतार भाङ्गे व्रत,
पति-कोल हैते टानि' आने ।
वैकुण्ठेर लक्ष्मी-गणे, येइ करे आकर्षणे,
तार आगे केबा गोपी-गणे ॥ १४२॥

ध्वनि—ध्वनि; **बड़**—अत्यन्त; **उद्धत**—बलशाली ; **पति-व्रतार**—पतिव्रता पत्नियों के; **भाङ्गे**—तोड़ देती है; **व्रत**—व्रत; **पति**—पति की; **कोल**—गोद; **हैते**—से; **टानि'**—लेकर; **आने**—आ जाती है; **वैकुण्ठेर**—वैकुण्ठ लोकों की; **लक्ष्मी-गणे**—सभी लक्ष्मियों को; **येइ**—जो; **करे आकर्षणे**—आकर्षित करती है; **तार**—उसके; **आगे**—सामने; **केबा**—क्या कहना; **गोपी-गणे**—वृन्दावन की गोपियों का।

अनुवाद

"कृष्ण की बाँसुरी की ध्वनि बड़ी उद्धत है और यह समस्त पतिव्रताओं के व्रतों को भंग करती है। इसकी ध्वनि उन्हें बलात् उनके पतियों की गोदों से निकाल लेती है। उनकी बाँसुरी की ध्वनि वैकुण्ठ लोकों की लक्ष्मियों तक को आकृष्ट करती है, तो भला वृन्दावन की असहाय युवतियों के विषय में क्या कहा जाए?

नीवि खसाय पति-आगे, गृह-धर्म कराय त्यागे,
बले धरि' आने कृष्ण-स्थाने ।
लोक-धर्म, लज्जा, भय, सब ज्ञान लुप्त हय,
ऐछे नाचाय सब नारी-गणे ॥ १४३॥

नीवि खसाय पति-आगे, गृह-धर्म कराय त्यागे,
बले धरि' आने कृष्ण-स्थाने ।
लोक-धर्म, लज्जा, भय, सब ज्ञान लुप्त हय,
ऐछे नाचाय सब नारी-गणे ॥ १४३ ॥

नीवि—अधोवस्त्र की गाँठ; **खसाय**—ढीली करती है; **पति-आगे**—पति के सामने भी; **गृह-धर्म**—घर के कर्तव्यों का; **कराय त्यागे**—त्याग करवा देती है; **बले**—बलपूर्वक; **धरि'**—पकड़कर; **आने**—लाती है; **कृष्ण-स्थाने**—कृष्ण के सामने; **लोक-धर्म**—सामाजिक शिष्टाचार; **लज्जा**—शर्म; **भय**—डर; **सब**—सभी; **ज्ञान**—ऐसा ज्ञान; **लुप्त हय**—छुप जाता है; **ऐछे**—इस प्रकार; **नाचाय**—नचाती है; **सब**—सभी; **नारी-गणे**—स्त्रियों को।

अनुवाद

"उनकी बाँसुरी की ध्वनि उनके पतियों के समक्ष उनके अधोवस्त्र की गाँठों को ढीला कर देती है। इस तरह गोपियाँ अपने घर का कामकाज त्यागकर कृष्ण के समक्ष आने के लिए बाध्य हो जाती हैं। इस तरह उनका सारा सामाजिक शिष्टाचार, लज्जा तथ भय भाग जाते हैं। उनकी बाँसुरी की ध्वनि सारी स्त्रियों को नचा देती है।

কাণের ভিতর বাসা করে, আপনে তাঁহা সদা স্ফুরে,
অন্য শব্দ না দেয় প্রবেশিতে ।
আন কথা না শুনে কাণ, আন বলিতে বোলয় আন,
এই কৃষ্ণের বংশীর চরিতে ॥ ১৪৪ ॥

কাণের ভিতর বাসা করে, আপনে তাঁহা সদা স্ফুরে,
অন্য শব্দ না দেয় প্রবেশিতে ।
আন কথা না শুনে কাণ, আন বলিতে বোলয় আন,
এই কৃষ্ণের বংশীর চরিতে ॥ १४४ ॥

কাণের—कान के छिद्रों के; **ভিতর**—अन्दर; **বাসা করে**—निवास करती है; **আপনে**—स्वयं; **তাঁহা**—वहाँ; **সদা**—सदैव; **স্ফুরে**—प्रकट रहती है; **অন্য**—अन्य; **শব্দ**—ध्वनियों को; **না**—नहीं; **দেয়**—अनुमति देती; **প্রবেশিতে**—प्रवेश करने की; **আন কথা**—दूसरी बातें; **না**—नहीं; **শুনে**—सुनती; **কাণ**—कान; **আন**—कुछ और; **বলিতে**—कहने के लिए; **বোলয়**—कहते हैं; **আন**—अन्य बातें; **এই কৃষ্ণের**—यही कृष्ण की; **বংশীর**—बाँसुरी के; **চরিতে**—लक्षण है।

अनुवाद

"उनकी बाँसुरी की ध्वनि उस पक्षी के समान है, जो गोपियों के कानों के भीतर अपना घोंसला बनाता है और वहीं पर सदा बना रहता है। वह उनके कानों में किसी अन्य ध्वनि को प्रविष्ट नहीं होने देती। निस्सन्देह, गोपियाँ न तो और कुछ सुन पाती हैं, न ही किसी और बात पर ध्यान एकाग्र कर पाती हैं, न ही वे समुचित उत्तर दे पाती हैं। कृष्ण की बाँसुरी की ध्वनि के प्रभाव ऐसे ऐसे हैं।"

तात्पर्य

गोपियों के कानों में कृष्ण की बाँसुरी की ध्वनि सदैव प्रधान बनी रहती है। इसलिए वे अन्य कुछ नहीं सुन पातीं। कृष्ण की बाँसुरी की पवित्र ध्वनि की सतत स्मृति उन्हें प्रबुद्ध एवं जीवन्त बनाये रखती है और वे अपने कानों में किसी अन्य ध्वनि को प्रवेश करने नहीं देतीं। चूँकि उनका ध्यान कृष्ण की बाँसुरी पर स्थिर रहता है, इसलिए वे अपने मनों को अन्य किसी विषय की ओर मोड़ नहीं पातीं। दूसरे शब्दों में, जिस भक्त ने कृष्ण की बाँसुरी की ध्वनि सुन ली है, वह अन्य विषय के बारे में बात करना या सुनना भूल जाता है। कृष्ण की बाँसुरी की यह ध्वनि हरे कृष्ण महामन्त्र द्वारा प्रस्तुत की जाती है। भगवान् का एक निष्ठावान भक्त, जो इस दिव्य ध्वनि का उच्चारण करता है और इसे सुनता है, वह इसका इतना अभ्यस्त हो जाता है कि उसका ध्यान किसी अन्य ऐसे विषय की ओर नहीं जाता, जो कृष्ण के आनन्दमय गुणों तथा साज-सामग्री से जुड़ा नहीं होता।

পুনঃ কহে বাহ্য-জ্ঞানে, আন কহিতে কহিলুঁ আনে,
কৃষ্ণ-কৃপা তোমার উপরে ।
মোর চিত্ত-ভ্রম করি', নিজৈশ্বর্য-মাধুরী,
মোর মুখে শুনায় তোমারে ॥ ১৪৫॥

पुनः कहे बाह्य-ज्ञाने, आन कहिते कहिलुँ आने,
कृष्ण-कृपा तोमार उपरे ।
मोर चित्त-भ्रम करि', निजैश्वर्य-माधुरी,
मोर मुखे शुनाय तोमारे ॥ १४५॥

पुनः—फिर; **कहे**—वे कहते हैं; **बाह्य-ज्ञाने**—बाहरी चेतना में; **आन**—कुछ और; **कहिते**—कहने के लिए; **कहिलुँ**—मैंने कहा है; **आने**—कुछ और; **कृष्ण-कृपा**—भगवान् कृष्ण की कृपा; **तोमार**—आपके; **उपरे**—ऊपर; **मोर**—मेरे; **चित्त-भ्रम**—मन को भ्रमित; **करि'**—करके; **निज-ऐश्वर्य्य**—अपने निजी ऐश्वर्य की; **माधुरी**—मधुरता; **मोर मुखे**—मेरे मुख द्वारा; **शुनाय**—सुनवाई; **तोमारे**—तुम्हें।

अनुवाद

पुनः अपनी बाह्य चेतना में आकर श्री चैतन्य महाप्रभु ने सनातन गोस्वामी से कहा, "मैं जो चाहता था वह नहीं कह पाया। भगवान् कृष्ण तुम पर अत्यन्त कृपालु हैं, क्योंकि मेरे मन को भ्रमित करके उन्होंने अपना निजी ऐश्वर्य तथा माधुरी प्रकट की है। उन्होंने ये सारी बातें तुम्हारी जानकारी के लिए मुझसे सुनवा दी हैं।

तात्पर्य

श्री चैतन्य महाप्रभु ने स्वीकार किया कि वे उन्मत्त व्यक्ति की तरह बोल रहे थे और ऊपरी स्तर पर अवस्थित लोगों की समझ के लिए उन्हें ऐसा नहीं करना चाहिए था। संसारी व्यक्ति को कृष्ण के शरीर, उनके गुणों तथा उनकी बाँसुरी के विषय में तरह-तरह के कथन किसी उन्मक्त पुरुष के कथन जैसे लगेंगे। यह हकीकत है कि कृष्ण सनातन गोस्वामी के समक्ष अपनी विशेष कृपा के कारण प्रकट होना चाहते थे। अतः कृष्ण ने किसी न किसी तरह से श्री चैतन्य महाप्रभु, जो पागल जैसे प्रतीत होते थे, उनके मुख से सनातन गोस्वामी को अपने तथा अपनी बाँसुरी के विषय में बतला दिया। श्री चैतन्य महाप्रभु ने स्वीकार किया कि वे सनातन गोस्वामी से और कुछ कहना चाहते थे, किन्तु भावावेश के कारण वे भिन्न विषय के बारे में बोल गये।

आमि त' बाउल, आन कहिते आन कहि ।
कृष्णेर माधुर्यामृत-स्रोते याइ वहि' ॥१४६॥

आमि त' बाउल, आन कहिते आन कहि ।
कृष्णेर माधुर्य्यामृत-स्रोते य्याइ वहि' ॥ १४६ ॥

आमि त' बाउल—मैं एक पागल हूँ; **आन कहिते**—कुछ कहने की अपेक्षा; **आन**

कहि—मैं कुछ और कह रहा हूँ; **कृष्णेर**—भगवान् कृष्ण की; **माधुर्य्य-अमृत**—मधुरता के अमृत की; **स्रोते**—लहरों में; **याइ**—मैं जाता हूँ; **वहि'**—बह।

अनुवाद

"चूँकि मैं उन्मत्त हो चुका हूँ, इसलिए मैं कुछ का कुछ कह रहा हूँ। इसका कारण यह है कि मैं भगवान् कृष्ण की दिव्य माधुरी के अमृतसागर की तरंगों द्वारा बहाये लिए जा रहा हूँ।"

तबे महाप्रभु क्षणेक मौन करि' रहे ।
मने एक करि' पुनः सनातने कहे ॥ १४७ ॥

तबे महाप्रभु क्षणेक मौन करि' रहे ।
मने एक करि' पुनः सनातने कहे ॥ १४७ ॥

तबे—फिर; **महाप्रभु**—श्री चैतन्य महाप्रभु; **क्षणेक**—एक क्षण के लिए; **मौन**—शाँत; **करि'**—होकर; **रहे**—रह गये; **मने**—अपने मन में; **एक करि'**—एकाग्र करके; **पुनः**—फिर; **सनातने**—सनातन गोस्वामी को; **कहे**—उपदेश देते हैं।

अनुवाद

इसके बाद श्री चैतन्य महाप्रभु एक क्षण तक मौन रहे। अन्त में अपने मन को सन्तुलित करते हुए वे पुनः सनातन गोस्वामी से बोले।

कृष्णेर माधुरी आर महाप्रभुर मुखे ।
इहा येइ शुने, सेइ भासे प्रेम-सुखे ॥ १४८ ॥

कृष्णेर माधुरी आर महाप्रभुर मुखे ।
इहा येइ शुने, सेइ भासे प्रेम-सुखे ॥ १४८ ॥

कृष्णेर—भगवान् कृष्ण की; **माधुरी**—मधुरता; **आर**—तथा; **महाप्रभुर मुखे**—श्री चैतन्य महाप्रभु के मुख से; **इहा**—यह; **येइ**—जो कोई भी; **शुने**—सुनता है; **सेइ**—वह व्यक्ति; **भासे**—तैरता है; **प्रेम-सुखे**—भगवत्प्रेम के दिव्य आनन्द में।

अनुवाद

यदि किसी को श्रीचैतन्य-चरितामृत के इस अध्याय में कृष्ण की माधुरी के विषय में सुनने का अवसर प्राप्त होता है, तो वह निश्चित रूप से भगवत्प्रेम के दिव्य आनन्दसागर में तैरने का पात्र होगा।

श्री-रूप-रघुनाथ-पदे यार आश ।
चैतन्य-चरितामृत कहे कृष्णदास ॥ १४९॥

श्री-रूप-रघुनाथ-पदे ग्यार आश ।
चैतन्य-चरितामृत कहे कृष्णदास ॥ १४९ ॥

श्री-रूप—श्रील रूप गोस्वामी के; **रघुनाथ**—श्रील रघुनाथ दास गोस्वामी के; **पदे**—चरणकमलों में; **ग्यार**—जिनकी; **आश**—आशा; **चैतन्य-चरितामृत**—*चैतन्य चरितामृत* नामक ग्रन्थ; **कहे**—लिखता है; **कृष्णदास**—श्रील कृष्णदास कविराज गोस्वामी।

अनुवाद

श्री रूप तथा श्री रघुनाथ के चरणकमलों की वन्दना करते हुए एवं उनकी कृपा की सदैव कामना करते हुए मैं कृष्णदास उनके चरणचिह्नों का अनुसरण करते हुए श्रीचैतन्य-चरितामृत का वर्णन कर रहा हूँ।

इस तरह श्रीचैतन्य-चरितामृत मध्यलीला के इक्कीसवें अध्याय का भक्तिवेदान्त तात्पर्य पूर्ण हुआ, जिसमें कृष्ण के आनन्दमय गुणों का वर्णन हुआ है ।